आक्षरी

साधु शरण सिन्हा

सौभाग्यं देवभाषायाः सौभाग्यं भारतस्य च ।
लिखन्ति यत्र संस्कृते विज्ञानस्यापि सेवकाः ॥

विज्ञान-विषय पर लेखन देवभाषा संस्कृत
के लिए सौभाग्य है ।

सिन्हामहोदयेन यत् सारल्यं समुपाश्रितम् ।
सर्वेषां सुखबोधाय तथाऽन्यत्र सुदुर्लभम् ॥

सिन्हा महोदय ने संस्कृत में सरलता
को प्रश्रय दिया है जो अबतक दुर्लभ था
और जिससे सब लोगों को प्रसन्नता होगी ।

लेखनं यशस्वीं स्यात् भविष्येऽपि सदा लेखनं ।
कामये स्यात् सदा सिद्धिः प्रयत्नं सफलं तथा ॥

उनका लेखन यशस्वी हो भविष्य में भी लिखें-उनका
प्रयल सफल हो यही मेरी कामना है ।

— आचार्य मिथिलेश झा

SRF
Depl. of Sanskrit
Faculty of Arts
B.H.U. VARANASI

याज्ञवल्क्य-मंडनमिश्रयोः ध्वनिः ।
भ्रमति कदाचिन्निस्सीम्नि गगने ॥
समीपे आगताः मया श्रुताः शैशवे ।
सस्वर पाठाः सर्वे "आक्षर्यां" समागताः ॥

याज्ञवल्क्य तथा मंडनमिश्र की ध्वनि
शायद असीम गगन में घूम रही है ।
वचपन में मेरे समीप आई-गूँज कानों
में पड़ी तथा वेदों के सस्वर पाठ की
अनु-प्रतिध्वनि सब आक्षरी
में आ गई ।

त्रूटिकारणेन क्षन्तव्योऽहं ।
सन्ति ये "आक्षरी" पुस्तके ॥
विज्ञान-राजनीति-वैराग्यम् च ।
सर्व-विषयाः आश्रयन्ते ॥

विज्ञान राज-नीति, वैराग्य आदि
विषयों पर लिखित लेखों में
निहित त्रुटिओं के लिए पाठक
क्षमा करें ।

— साधुशरण सिन्हा

आक्षरी

साधु शरण सिन्हा

आक्षरी

अधिकृत वितरक :—

भारती-प्रकाशन

जे० बी० एल मार्केट

खजांची रोड पटना—800 004

Phone No. : 0612 : 659115

अतिरिक्त पुस्तक प्राप्तिस्थान :—

महावीर पेपर प्रोडक्टस

गणपति मार्केट, खजांचीं रोड पटना - 4

Phone No. : 0612 : 674784

मूल्य – 100.00 रु०

प्रकाशक :—

सिन्हा टेक्निकल सर्विसेज

सिन्हा हाउस, गोलवली, महालक्ष्मी डाइंग के सामने, एम० आइ० डी० सी०।

डोंबिवली पूर्व, जि०- थाना, पिन - 421 203 (महाराष्ट्र)

Phone No. : 0251 : 456760

अपने विचार

रासायनिक अभियन्ता होकर भी वीसवीं सदी में संस्कृत में लिखने का प्रयोजन इस प्राचीन समृद्ध विश्व-शान्ति निनादित करती संस्कृत भाषा के प्रति आदर निष्ठा तथा यथा योग्य पुनर्प्रतिष्ठित करने का तुच्छ प्रयत्न मात्र है। वेद ऋचाओं के सस्वर पाठ के प्रति आकर्षण सम्मोहन (1) संस्कार जन्य अनुभूति तथा भारतीय सामाजिक परिवेश में संस्कृत शब्दों की प्रति-ध्वनि सर्वदा सर्वथा अनुप्रेरित करती रही है। (2) कि अहं, ब्रह्म, सोऽहं, अनहद नाद, पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते, क्या है कैसे समझा प्राप्त किया जा सकता है यह सब योगिभिर्ध्यानगम्यम् है और इसीलिए मैंने पुनः पुनः पठिता गीता (3) लिखा जो कृष्ण कृपा से ही प्राप्त हो सकता है। जब विश्व रासायनिक संघ आनंदामाइड (4) (चीनी से हजारों गुना अधिक मीठा के लिए प्रयुक्त संस्कृत शब्द) का प्रयोग करता है तो मेरा संस्कृत में लिखने का प्रयत्न अवश्यमेव उचित एवं सामयिक है।

सबसे बड़ा प्रश्न पूजा जप तप ध्यान आसन प्रवचन मंदिर गमन संत समागम के औचित्य का इस वींसवी सदी या सृष्टी के अन्त तक सामयिक रहने का है। सभी युग समय में हिंसा कदाचार व्यभिचार दुर्नीति गमन पर-पीड़न रहा है तथा सृष्टि के अन्त तक रहेगा। पहले युद्ध युगल द्वन्द्व तक सीमित था सामूहिक होकर भी सृष्टि का विनाशक नहीं था पर अब निमिष मात्र में ही मानवता का, सृष्टि का विनाश संभव है (5) पहले शास्त्रादेश का पालन, ऋषि मार्ग प्रदर्शन तप योग आदि द्वारा आत्मा का उन्नयन युद्ध परिसीमन के लिए उपयुक्त था और सामाजिक मूल्य सर्वोपरि था पर आज आर्थिक प्रतिद्वन्दिता में सारे मूल्य तिरोहित हो गए हैं और परिणाम पूरा मानव समुदाय कुंठा तनाव आत्मविश्वास में कमी तथा अशांति का अनुभव कर रहा है जिसका प्रतिकार कुछ है भी नहीं।

इसीलिए आर्थिक प्रतिद्वन्द्विता विज्ञान प्रतिद्वन्द्विता श्रेष्ठता प्रतिद्वन्द्विता में भारतीयों को आना ही है तथा स्वीकारना है। समाज समुदाय की सच्चाइयों का, पृथ्वी पर होने वाले सतत परिवर्तन में सम्मिलित होना ही है (6)

अपनी पुरानी संस्कृति का युग के परिवर्तन से सामञ्जस्य बिठाना पग पग पर पग मिलाना भारतीयों के लिए सर्वदा के लिए पहला कर्त्तव्य है और सब दिन के लिए हमेशा के लिए रहेगा। चुनौती रहेगी ताल मेल बिठाने और आगे बढ़ने की। इसीलिए मैंने सारे प्राचीन मूल्यों का आधुनिकता के संदर्भ में विज्ञान तकनीकी के संदर्भ में विश्व-प्रतिद्वन्द्विता के संदर्भ में देखा है (7) और मुझे प्रसन्नता है कि हजार वर्षों की दासता (8) को झेलकर भी हम अपना प्रतिनिधित्व मौलिकता नहीं भूले हैं न हमारी प्रज्ञा कुंठित अवहेलित अधोगामी हुई है और पचास वर्षों की तुच्छ अवधि में ही हमने विश्व स्तर की श्रेष्ठता में अपना स्थान बना लिया है और मेरा विश्वास है भारत के युवक सदैव श्रेष्ठता लायेंगे श्रेष्ठता प्राप्त करेंगे।(9)

तथापि मेरा सोचना है विज्ञान के क्षेत्र में प्रगति अभी और अपेक्षित अपेक्षणीय है यद्यपि दूसरे देशों में जाकर अपनी क्षमता प्रज्ञा विधा का पूर्ण प्रदर्शन कर रहे हैं।

साथ-साथ संस्कृत में व्यक्त भावों का,विचारों क्रिया कलापों का,विभिन्न न्यास विधियों का सम्यक सतत प्रचार प्रसार हो (10) तथा विज्ञान के विषयों का संस्कृत में समावेश हो। (11) संस्कृत में आधुनिक सामयिक सम्यक लेखन हो तो संस्कृत का रूप निखरेगा विखरेगा जिससे मानव समाज का कल्याण होगा और श्रेय मिलेगा संस्कृत को तदुपरांत उसके प्रचारको प्रसारको को। एक बात और। संस्कृत सरल पठनीय हो। (12) वेदों की भाषा क्लिष्ट है। बाद की संस्कृत-भाषा में सरलीकरण का प्रयास लगता है। आजकल हिन्दी-अंग्रेजी सब भाषा में काव्य को भाषा से छन्द लय से मुक्त किया जा रहा है।महाकवि कालिदास ने प्राक्कथन में ही विद्वानों को उनकी भाषा पद-लालित्य,शब्द-विन्यास,भावार्थ उपमा आदि से पूर्णरूपेण सन्तुष्ट होने पर ही उनके काव्यों को पढ़ने का आह्वान किया है जो अक्षरशः सत्य है। आज भी संस्कृत में लेखन संस्कृत भाषा पर अधिकार होने पर ही संभव माना जाता है तथापि मैंने लिखा संस्कृत में (13) कारण स्पष्ट है संस्कृत की गरिमा जन जन तक हर विषय क्षेत्र में पहुँचाई जाए। इस क्षेत्र में मेरा प्रयास कहाँ तक सफल है पाठक ही वा समय बतायेगा।

चूँकि संस्कृत-साहित्य में दिखावे वा आडम्बर का स्थान नहीं है (14) इसलिए संस्कृत भाषा की गरिमा भी इसके पाठकों से सदा जुड़ी रही है। आदर्शवाद के प्रतीक संस्कृत-साहित्य के प्रणेता अध्येता दोनों रहे हैं तथा सबदिन के लिए रहना चाहिए। पर आदर्शवाद के अनुगामी कम होते हैं (15) इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि आदर्शवाद त्याज्य है। नूतन पुरातन का सामंजस्य हो (16) समवेत स्वर में वेद-ऋचा का उद्घोष हो– विश्व-शान्ति के लिए भारतीय हमेशा अग्रणी हो (17)

जीवन के निस्सीम पथ पर मिले पं० श्री मिथिलेश झा जिन्होंने आद्यन्त पढ़ा बहुमूल्य सुझाव दिए।

अनेक अनेक धन्यवाद !

पाठकों से आग्रह है कि अपने सुझाव विचार मेरे पास भेजें।

— साधु शरण सिन्हा

इत्यलम्

तपस्थली

अथरी सीतामढ़ी (बिहार)

31/3/1998

अपने विचार के संदर्भ

(1) श्लोक सं० 204

श्लोक सं० 228

(2) श्लोक सं० 24

(3) श्लोक सं० 169

(4) श्लोक सं० 42

(5) श्लोक सं० 37

(6) श्लोक सं० 31, 35, 38, 39, 40, 251, 249

(7) श्लोक सं० 41

(8) श्लोक सं० 27, 28, 29, 30, 32, 33, 189

(9) श्लोक सं० 31

(10) श्लोक सं० 252

(11) श्लोक सं० 15, 23

(12) श्लोक सं० 12

(13) श्लोक सं० 16, 208

(14) श्लोक सं० 13, 14

(15) श्लोक सं० 72

(16) श्लोक सं० 167

(17) श्लोक सं० 237

■

विषय सूची

आक्षरी

1. प्रार्थना

प्रसीदतु विनायकः ।
पार्वती शंकराभ्यां सह ॥
सरस्वती ब्रह्माविष्णुः ।
सर्वे देवाः प्रसीदन्तु ॥

हिन्दी

प्रथम गणेश प्रसन्न हों
पार्वती शंकर के साथ ।
सरस्वती ब्रह्मा विष्णु
सभी प्रसन्न हों साथ-साथ ॥

2. भगवती प्रार्थना

आदिस्त्वं अन्तस्त्वं ।
त्वमेव मध्यरूपिणी ॥
त्वयि सर्वे विलीयन्ते ।
रक्ष मार्गदर्शिनी ॥
त्वमेव प्राणरक्षिणी ।
त्वमेव दुष्टमर्दिनी ॥
जनाय त्वं यक्षिणी ।
नेष्टकानां तक्षिणी ॥
कालव्यालधारिणी ।
खलं खड्ंगप्रहारिणी ॥

त्वमेव विन्ध्यवासिनी ।
वरदहस्तसुहासिनी ॥
त्वमेव छिन्नमस्तका ।
चंडमुंडविनाशिनी ॥
चामुंडा च सिद्धिदा ।
क्षमस्व वरदरूपिणी ॥

कोटिपापनाशिनी ।
श्वेतपद्मवासिनी ॥
करे वीणाधारिणी ।
विष्ण्वंक शायिनी ॥
त्वमेव विश्वरूपिणी ।
त्वमेव जंभनादिनी ॥
रक्ष विश्व मोहिनी ।
क्षमस्व मंत्ररूपिणी ॥
रक्ष ब्रह्मचारिणी ।
क्षमस्व वज्रधारिणी ॥
ज्ञानलोकचारिणी ।
कलौ युगे तारिणी ॥

आवाहनम् न विसर्जनम् ।
धूपं दीपं न पूजनम् ॥
योगं ध्यानं न चासनम् ।
मातुराशा केवलम् ॥
रक्ष रक्ष क्षमस्व क्षमस्व ।
कुर्याम् किं दर्शय ॥
पापात् पाहि पाहि नः ।
येनेष्टं चिन्तय ॥

हिन्दी

आदि तुम अन्त तुम
तुम ही मध्य रूपिणी
तुझमें सभी विलीन हों
रक्ष मार्ग दर्शिनी ॥
तुम ही प्राण रक्षिका
तुम ही दुष्टमर्दिनी ।
जनों के लिए यक्षिणी
अशुभ के लिए तक्षिणी ॥
काल रूपी व्याल तुम
दुष्ट खड्ग प्रहारिणी ।
तुम ही विन्ध्यवासिनी
वरद हस्त सुहासिनी ॥

तुम ही छिन्नमस्तका
चंडमुंड विनाशिनी ।
चामुंडा और सिद्धिदा
वर दे वरदरूपिणी ॥
कोटि पापनाशिनी
श्वेतपद्मवासिनी ।
हाथ में वीण ले
विष्णु अंकशायिनी ॥
तुम ही विश्वरूपिणी
तुम ही जंभनादिनी ।
क्षम मंत्ररूपिणी
रक्ष विश्वमोहिनी ।
रक्ष ब्रह्मचारिणी
क्षमस्व वज्रधारिणी ।
ज्ञानलोकचारिणी
कलियुगकी तारिणी ।।

आवाहन न विसर्जन
धूप दीप न पूजन
न योग ध्यान आसन
मां की कृपा सर्वफल ।
रक्षा करो क्षमा करो
क्या करूँ मार्ग बता ॥
पापी से तुम रक्षा करो
यथा योग्य मैं खड़ा ।
रक्ष-रक्षा करो
क्षमस्व-क्षमा करो ॥

कामना

(3) कष्टं न अनुभाव्यं ।
उपस्थिते काले गन्तुम् ॥
मातर् इच्छाम्यहम् ।
कर्त्तव्यम् कुर्वन् कर्त्तुम् ॥
नहीं कष्ट का अनुभव
अन्त काल में हे मातः ।
कर्त्तव्य कामना करते रहना
यही भावना हे मातः ॥

(4) मया प्राप्तानि सर्वानि ।
भूतले तवानुकम्पया ॥
चेत् किमपि अप्राप्तं ।
सन्तोषं मह्यम् प्रदत्तं त्वया ॥

सब कुछ मिला तेरी अनुकम्पा
जीवन में कुछ शेष नहीं ।
अगर कहीं कुछ बचा न पाया
तुमने दिया सन्तोष वहीं ॥

(5) नमोऽस्तु ते मातर् ।
आगच्छ अन्ते जपतस्य ॥
समाधिस्थं स्यादिन्द्रियं ।
जानन्नपि गन्तुमागतस्य ॥

शत-शत नमन नमन हे मातः
उपस्थित रहना अन्त समय ।
समाधि प्राप्त हो सजग इन्द्रियाँ
ज्ञान रहे जब काल विलय ॥

व्यक्तिगतः

(6) क्षम्यताम् सर्व देवाः ।
अपराधानि कृतानि मया ॥
प्रार्थयामि एकान्ते ।
क्षम्यताम् सर्व जनाः ॥

क्षमा करें सभी देव
जितने पाप हुए मुझसे ।
एकान्त में यही प्रार्थना
सभी लोग भी क्षमा करें ॥

(7) अकरणीयं यत्कृतं ।
मया मदे अज्ञातं ॥

भगवत्या पादेनाक्रम्य ।

सर्वमदो मे व्यपगतः ॥

अधम कर्म जितने भी

मद में, अज्ञात हुए मुझसे ।

भगवती ने उचित दंड दे

मेरे गर्व को चूर किया ॥

(8) सृष्टिरुपा प्रतिपालिका ।

कामरूपिणी देवी ॥

जंभनादिनी नतमस्तक ।

आगच्छ गमने काले ॥

सृष्टिरूपा प्रतिपालिका

कामरूपिणी देवी ।

अन्तसमये में आजाओ ॥

(9) कृपया पाथेयं फलम् ।

कृपया सम्प्राप्तं बलम् ॥

कृपा सर्व सुख मूले ।

कृपया तरति अर्णवम् ॥

कृपा से फल मिले

कृपा से बल मिले ।

कृपा सभी सुख का मूल

कृपा से भवसागर तरे ॥

(10) शिवस्य नाम्ना स्वस्त्यस्तु ।

ध्यानेन आप्नोति बलम् ॥

शिवः स्मरणीयः प्रातः ।

प्रत्याहारे सदा सदा ॥

शिव नाम कल्याण करे

ध्यान करे तो बल मिले ।

प्रातः स्मरणीय शिव हैं

प्रत्याहार के लिए सदा ॥

संस्कृत-भाषायाः

(11) मन्त्रे संस्कृतभाषायाः ।

मानवत्वं शब्दायते ॥

यथा वक्तुं तथा लिखितुम् ।

नांग्ल भाषेव यदा ॥

संस्कृत भाषा के मंत्रों में

मानवता झलकती है ।

जो बोलें वही लिखें

अंग्रेजी भाषा की तरह नहीं ॥

(12) विज्ञानविषयेन कारणेन ।

आंग्लभाषा आदृता ॥

सुलभाः पठनीयाः संस्कृते ।

भविष्ये खलु करणीयाः ॥

विज्ञान विषय के कारण ही

अंग्रेजी इतनी प्रचलित हुई ।

संस्कृत में भी इसी तरह

सुलभ बनाना कर्त्तव्य रहा ॥

(13) कदापि न संस्कृतसाहित्ये ।
पुष्पिताः आश्रयन्ते ॥
पाठयति सदा ऐक्यं ।
मनसा वाचा कर्मणा ॥

संस्कृत में दिखावे का
कभी भी स्थान नहीं ।
मन वचन कर्म तीनों में
एकता सिखाता संस्कृतसाहित्य ॥

(14) संस्कृतं पाठयति मार्दवम् ।
जनाय ददाति आर्जवम् ॥
धनाय लोभाय मदनाय ।
यः पठति सः पतिष्यति ॥

संस्कृत सिखाए मृदुतां
जन को दे सरलता ।
धन लोभ काम के लिए
जो पढ़ता वह डूबेगा ॥

(15) संस्कृतसाहित्ये तु लेख्याः ।
राष्ट्रीयाधुनिकाः लेखाः ॥
शोधोत्पन्ने तकनीकी ।
विज्ञानविषयाः सम्मिलिताः ॥

संस्कृत साहित्य में लिखे जाएं
आधुनिक विषयों के लेख सभी ।
शोध से जो तकनीकी
विज्ञान विषय भी सम्मिलित हों ॥

(16) मया अल्पज्ञेन लिखिताः ।
श्लोकाः संस्कृतभाषायाम् ॥
आंग्लभाषायाः विषयाः ।
व्यक्ताः श्रद्धया निष्ठया ॥

मेरे जैसा अल्पज्ञ ने
संस्कृत में श्लोक लिखा ।
अंग्रेजी में व्यक्त भावों के
रूपान्तर के कारण ही ॥

(17) अथवा संस्कृतविषयाः ।
आंग्लभाषायाम् कृताः ॥
चेत् पाठकैः श्लाघ्याः ।
कृतकृत्यः भविष्याम्यहम् ॥

अथवा संस्कृत विषयों का
मैंने आंग्ल में अनुवाद किया ।
अगर पाठकों ने सराहा
मैं कृतकृत्य हो जाऊँगा ॥

(18) संस्कृतभाषायाः विषयाः ।
आंग्लभाषायामनुवादे ॥
मया अनुमतं न शक्नोमि ।
श्रमसाध्यः वा असंभवः ॥

संस्कृत विषयों का अंग्रेजी अनुवाद ।
श्रमसाध्य या असंभव है ॥

(19) जगद्धिताय ये श्लोकाः ।
आंग्लभाषायामसंभवाः ॥
आंग्लभाषाम् न जानामि ।
वा आंग्लभाषा अक्षमा ॥

संसार की भलाई के लिए
संस्कृत के श्लोकों का अंग्रेजी अनुवाद अविकल
असंभव है । या तो मैं अंग्रेजी नहीं जानता
या अंग्रेजी में संभव ही नहीं ॥

(20) आंग्ल-भाषायाम् "स्वस्त्यस्तु" ।
मया लिखितम् पुस्तकम् ॥
"तांडव-नृत्यम्" "गीता सारः" ।
अवश्यमेव पठितव्यम् ॥

अंग्रेजी में मेरे द्वारा लिखित पुस्तक ।
"स्वस्त्यस्तु" के "तांडव-नृत्य"
और "गीता सार" अवश्य पढ़ें ॥

(21) मिथ्या न वेदोपनिषदः ।
न जल्पाः विज्ञान-विषयाः ॥
प्रारंभे मंत्र-पठेत् तदा ।
फीजन-फ्यूजन पठनीयौ ॥

वेदोपनिषद है व्यर्थ नहीं
विज्ञान-विषय हैं उपयोगी ।
पहले मंत्रपाठ करें
फिर Fission-fusion अध्ययन करें ॥

(22) स्वस्त्यस्तु मानवाय ।
मया लिखितः श्लोकः ॥
"स्वस्त्यस्तु" नाम्ना पुस्तकम् ।
आंग्लभाषायामपि ॥

मानव-कल्याण के लिए
मैंने श्लोक लिखे ।
इसीलिए (मानव-कल्याण के लिए स्वस्ति + अस्तु)
अंग्रेजी की पुस्तक का नाम स्वस्त्यस्तु रखा ॥

(23) अमरकोषः अमरकृतिः ।
अमरत्वमाप्नुयात् ॥
अमरकोषं विज्ञानशब्दैः ।
समृद्धं कुर्वन्तु ॥

अमरकोष है अमरकृति
अमरत्व को प्राप्त है ।
अमरकोष में अब
विज्ञान शब्दों का समावेश हो ॥

(24) यदा संस्कृतभाषायाम् ।
वाद-विवादं श्रृणोम्यहम् ॥
हृदयं उत्फुल्लं जातं ।
अनुकर्त्तुम् इच्छाम्यहम् ॥

संस्कृत में वाद-विवाद सुनने से ।
हृदय उत्फुल्ल हो जाता है तथा
अनुकरण करने का मन होता है ॥

(25) संस्कृतभाषायाम् शान्त्यर्थम् ।
हिन्दीभाषायाम् विनोदाय च ॥
आंग्ल-भाषायाम् जीविकार्थम् ।
विज्ञानविषये शिक्षणेन च ॥

संस्कृत में लिखूँ शान्ति के लिए
हिन्दी में विनोद के लिए ।
अंग्रेजी में द्रव्यार्जन
शिक्षा कारण विज्ञान विषयमें ॥

(26) आंग्लभाषायाम् सुकरम् ।
हिन्दीभाषायाम् कष्टकरम् ॥
लिखित्वा संस्कृते लेखम् ।
कृतकृत्योऽस्मि अहर्निशम् ॥

अंग्रेजी में लिखना सुलभ
हिन्दी में कष्टकर ।
संस्कृत में लिखकर लेखों को
कृतकृत्य समझूँ अपने को ॥

राष्ट्रीयता

(27) सहस्रवर्षाणाम् दासत्वं ।
पुनरेव न स्वीकरिष्यन्ति ॥
नाभिकीय अस्त्रेण सह ।
भारतीयाः कृष्णानुचराः ॥

हजार वर्षों की दासता फिर कृष्णानुचर ।
अस्त्रयुक्त भारतीय स्वीकार नहीं करेगें ॥

(28) सहस्त्र वर्षाणि वयं दासाः ।
केन कारणेन भारतीयाः ॥
भविष्ये न पुनरावृत्तिं ।
स्वातंत्र्यम् रक्षन्तु सर्वदा ॥

हजार वर्षों तक हम क्यों दास रहें-भारतीय
सोचें । भविष्य में फिर दास नहीं बनें
तथा स्वतंत्रता की रक्षा सदा करें ॥

(29) अद्यारभ्य युद्धभूमौ ।
भारतीयाः अजेयाः ॥
गीता तदा गेया ।
वेदोपनिषदश्च श्रेष्ठाः ॥

आज के बाद युद्ध भूमि में भारतीय ।
विजेता होंगे । गीता तभी गायी जाएँ
वेदोपनिषद् श्रेष्ठ हों ॥

(30) वयं पराजिताः युद्धे ।
अस्त्रेण शस्त्रेण हीनाः ॥
वैरिनि उपस्थिते द्वारे ।
नांशयितुम् सदा तत्पराः ॥

अस्त्र शस्त्र नहीं रहने के कारण
हम युद्ध में पराजित हुए।
शत्रु द्वार पर आते ही
नाश कर दिए जाएँ ॥

(31) व्यापारे व्यवसाये च ।
उद्योगे च श्रेष्ठताम् ॥
नाभिकीयशस्त्रास्त्रेषु ।
भारतीयाः सक्षमाः ॥

व्यापार, व्यवसाय, उद्योग में
भारतीय श्रेष्ठता लायें।
नाभिकीय शस्त्रास्त्रों में
भारतीय तैयार रहें ॥

(32) क्षमी, निश्शस्त्राः मतवैभिन्याः ।
स्वल्पे सन्तोषिनः सदा ॥
अज्ञाताः जीवनचक्रस्य ।
वयं भूते पराजिताः ॥

क्षमावान, निश्शस्त्र मतवैभिन्य
थोड़े में सन्तोष रखना तथा।
जीवन-चक्र में होनेवाले परिवर्त्तन से
अज्ञात रहने के कारण भूत में हम पराजित हुए ॥

(33) सजगाः शस्त्रास्त्रेण ।
सतर्काः सदा एकीभूय ॥

आत्मबलेन तत्पराः ।

वयं तदा अपराजेयाः ॥

भारतीय सजग सतर्क, शस्त्र अस्त्र से ।

पूर्ण, सदा एकता तथा आत्मबल से ही

अपराजित रहेंगे ॥

विज्ञान-विषये

(34) नूतनानुकरणीयाः ।

विज्ञानविषयस्य शोधाः ॥

विज्ञानेशोधे सम्पन्ने ।

अमृतफलमिवाप्नुयात् ॥

विज्ञान विषय के नए शोध

अनुकरण किए जायें ।

नए शोध अमृत फल की

तरह हैं ॥

(35) गच्छन्तु गच्छन्तु तत्र ।

यत्रास्ति विज्ञानच्छाया ॥

विज्ञानमस्ति कामधेनुः ।

दोग्धारः सर्वे जनाः ॥

विज्ञान की छाया में

सब लोग जाएँ ।

विज्ञान कामधेनु है

दुहनेवाले सभी लोग ॥

(36) यथा "मीर" च "सोयुज" च ।
निस्सीम्नि गगने शोधरते ॥
भारतीयाः उपग्रहाः तथैव ।
प्रेषयन्तु समाचारार्थम् ॥

MIR (रूस का अन्तरिक्ष स्टेशन 1990-1997) तथा अमेरिका का सोयुज गगन में शोध कर रहे हैं । इसी तरह हिन्दुस्तान के भी उपग्रह गगन में भेजे जाएँ । (1997 में मीर क्षति ग्रस्त हो चुका था ।)

(37) परमाण्वणुबमाः घातकाः ।
कोटिशः मानवानाम् ॥
आगतोऽस्ति यथा कालो ।
वैरिणः जनानाम् मानवाः ॥

करोड़ो मानव को मारनेवाले
परमाणु बम हैं ।
लोगों के मनुष्य ही शत्रु बन गए ॥

(38) शोधे प्रकृत्यनुसंधाने ।
युवकाः भारतीयाः ॥
सिद्धान्ते व्यवहारिके ।
विश्व-स्तरे वैज्ञानिकाः ॥

शोध और प्राकृतिक अनुसंधान में
सिद्धांत में व्यवहार में ।
विश्व-स्तर के भारतीय
वैज्ञानिक श्रेष्ठ हैं तथा रहना है ॥

(39) शोधाः समर्पिताः उद्योगाः ।

लाभोन्मुखिनः व्यापाराः ॥

राकेटप्रक्षेपने तथा क्षमः ।

तारकप्रदेशे यथा गच्छेत् ॥

उद्योग शोध समर्पित हों

व्यापार लाभोन्मुखी हों ।

राकेट प्रक्षेपन इतना सक्षम हो

कि तारक प्रदेश में जा सके ॥

(40) विश्वे पठितुम् शोधाय ।

गन्तव्यं भारतवासिभिः ॥

प्रथमाः सन्तु स्पर्धायाम् ।

ऋषेः रक्तेन मुनेः प्रज्ञया ॥

शोध करने के लिए

भारतीय विदेश जाएँ ।

ऋषि के रक्त तथा मुनि की प्रज्ञा

के कारण विश्व-स्पर्धा में प्रथम हों ॥

(41) सर्व-साधना-सम्पन्नाः ।

चारित्र्यबलेन कुत्रापि ॥

देवाः वसवः आशिष्यन्ते ।

साफल्यं विश्व-स्तरे प्राप्नुयात् ॥

सर्व-साधन-सम्पन्न
चरित्र बल से कहीं भी ।
देव वसु के आशीर्वाद से
विश्व-स्तर की सफलता प्राप्त करें ॥

(42) संस्कृतभाषा समादृता ।
"आनंदामाइड" इति नाम्ना ॥
'आनन्दामाइड' इति मधुरम् ।
शर्करायाः सहस्त्रगुणम् ॥

विश्व रासायनिकों ने "आनंदामाइड" नाम
देकर संस्कृत भाषा का आदर किया ।
आनंदामाइड चीनी से हजारों गुना
अधिक मीठा है ॥

(43) विविक्ते प्रकृत्यनुसंधानेन ।
कालजयी व यः सृजति ॥
औषधिं चिकित्सार्थम् विज्ञानार्थम् ।
तस्मै नमस्करोमि पुनः पुनः ॥

प्रकृति के अनुसंधान द्वारा एकान्त में
कालजयी के समान जो औषधि तथा ।
विज्ञान में योगदान देते हैं उनको बारंबार नमस्कार ॥

(44) सूर्यात् पृथ्वी निःसृता सौर-मंडले ।
सूर्यः ज्वलति अहर्निशम् ॥

ज्वलनं यदा स्थगितम्: ।

पृथ्वी गमिष्यति रविम् ॥

सूरज से पृथ्वी निकली

सूर्य है जलता रातदिन ।

जलना बन्द हो जायेगा

भू जायेगी मिल ॥

(45) चन्द्रेण जीवनं भूमौ ।

चन्द्रः ददाति पावसम् ॥

चन्द्राकर्षणेन वर्धते ।

जीवानाम् शरीरः ॥

चन्द्र से ही जीवन पृथ्वी पर

चन्द्र से ही वर्षा होती ।

चन्द्र आकर्षण से ही

जीवों की देह बढ़े ॥

(46) तारकाः सूर्याः सन्ति ।

रात्रौ दृश्यन्ते केवलम् ॥

कोऽपि तारकः रवेः पार्श्वे ।

आगच्छेत् चेदेकः विखंडितः ॥

सभी तारे सूर्य हैं

रात्रि में टिमटिमाते ।

अगर कोई तारा अपने सूर्य के पास

आ जाए तो इस सूर्य या उस ॥

तारक का खंड खंड हो जाए ।

(47) कोटिशः सूर्याः भ्रमन्ति ।
कोटिशः नीहारिकायाम् ॥
चापि सूर्याः विलीयन्ते ।
कृष्णविवरे सदा सदा ॥

करोड़ों सूर्य घूम रहे हैं
करोड़ों नीहारिका में ।
सूर्य का भी नाश होता है
कृष्ण विवर में सदा सदा के लिए ॥

(48) तारकोऽपि च नश्यति वै ।
दस-सहस्त्रवर्षेषु एकः ॥
यथा दृष्टमेकं दृश्यम् ।
सामीप्ये गते काले ॥

दस हजार वर्षों में
एक तारा की मृत्यु होती है ।
ऐसा ही दृश्य कुछ
दिन पहले दिखाई पड़ा था ॥

(49) सूर्यः उत्क्रामति तापम् ।
फ्यूजनस्य प्रक्रियायाम् ॥
शीतं फ्यूजनम् चापि ।
प्राप्यं वैज्ञानिकैः जनैः ॥

फ्युजन द्वारा सूर्य से
ताप उत्पन्न होता है ।
शीत फ्यूजन संभव है
विज्ञानिओं द्वारा (प्रयोग में आंशिक सफलता मिली है 1997 तक) ॥

(50) "सूर्यः उदयति प्राच्यां" ।

कथमपि न तर्कसंगतम् ॥

सूर्यः अपि भ्रमति कक्षायाम् ।

दिशाः सदा परिवर्तन्ते ॥

"सूर्य का पूर्व उगना"

ऐसा कथन सत्य नहीं है ।

क्योंकि सूर्य भी कक्षा

में घूमकर दिशा बदलता रहता है ॥

(51) एकेन पादक्रमणेन ।

पंच वेगान् प्राप्नोति खलु ॥

स्ववेगः भू-भ्रमणं वर्द्धनम् ।

सूर्यगतिः च नीहारिकाः ॥

एक पग बढ़ने से

पाँच वेग प्राप्त होते हैं ।

स्व वेग, पृथ्वी का धुरी पर घूमना

आगे बढ़ना सूर्य वेग और नीहारिका का भागना ॥

(52) प्रकाशस्य वेगम् प्राप्तुम् ।

वस्तु शक्नोति न खलु ॥

यदि चेत् प्राप्यते वेगः ।

भारः अपरिमितः जायते ॥

आइन्सटीन के सिद्धांत के अनुसार
वस्तु प्रकाशवेग नहीं प्राप्त कर सकती ।
अगर वस्तु ने प्रकाशवेग पा लिया
तो भार अपरिमित हो जायेगा ॥

(53) "शु-मेकरः" उल्कापिंडः ।
वृहस्पतिग्रहे आपतितः ॥
सर्वे जीवनाः हनिष्यन्ते ।
पतेत् भूमौ यदि मीलाकारः ॥

"Shoe- Maker" उल्का पिंड जुलाई 1994 में
वृहस्पति सतह पर टकरा गया ।
अगर एक मील आकार का उल्का पिंड
पृथ्वी पर गिर जाए तो जीवन समाप्त हो जायेगा ॥

(54) कोटिशः वर्षाणि वै ।
भुवः आयुः शिष्यते ॥
मयैव लिखितः लेखः ।
"धर्मयुगे" प्रकाशितः ॥

पृथ्वी की आयु अभी भी करोड़ों वर्ष शेष है ।
मेरा लेख धर्मयुग दिनांक 16/7/1994 में प्रकाशित हुआ है ।

(55) पृथ्वीमंगलाभ्यां मध्ये ।
भ्रमन्ति उल्काः द्वि-सहस्राः ॥

नाशयिष्यन्ति ध्रुवं जनाः ।
पथात् च्युताः यदि भुवं प्रति ॥

पृथ्वी मंगल के बीच में
उल्का दो हजार भ्रयणशील है ।
पृथ्वी तरफ जो बढ़े कभी
जन उनका नाश करे अवश्य ॥

(56) गुरुत्वाकर्षणेनभू भ्रमति ।
प्रत्याकर्षणेन वर्धते पुरतः ॥
वायुमंडलेन सहभ्रमति ।
कणो एको न विमुच्यते ॥

गुरुत्वाकर्षण से पृथ्वी घूमे
प्रत्याकर्षण से आगे बढ़े ।
वायुमंडल भी साथ चले
कण एक न छिटक सके ॥

(57) जीवनम् वृहस्पतेर्चन्द्रे ।
कदाचित् युरोपामध्ये ॥
अवश्यमेव परिमार्गितव्यम् ।
अन्यसौरप्रदेशे जीवनम् ॥

शायद वृहस्पति के चाँद Europa में
जीवन हो (वर्फ मिलने से 1997) ।
अन्य सौर प्रदेश में जीवन
की खोज होनी चाहिए ॥

(58) पुच्छलतारकाः च भ्रमन्ति ।

सौरप्रदेशे सदा सदा ॥

आगच्छति भूसमीपे चेत् ।

अति सामीप्ये नाशयेत् ॥

पुच्छल तारा घूमे

सौर प्रदेश में सदा सदा ।

अति समीप भू के आ जाए

उसका नाश जन अवश्क ही सोचें ॥

(59) नैके सूर्याः विलीयन्ते

कृष्णविवरे सदा सदा ।

बिग-बैंग-विस्फोटः निश्चितः

सृष्टिरपि पुनः निश्चिता ॥

कितने सूर्य कृष्णविवर

को प्राप्त होते हैं । फिर एक दिन

BIG BANG का विस्फोट होकर सृष्टि

का पुनः सृजन होगा ॥

कम्प्यूटरम् रोबोटश्च

(60) कम्प्यूटरम् रोबोटश्च ।

उभौ युगस्य चालकौ ॥

एतयोरनुसन्धाने वैं ।

भारतीया अग्रगण्याः स्युः ॥

कम्प्यूटर रोबोट इस
युग के दोनों चालक हैं ।
इसीलिए भारतीय भी
इसमें अग्रणी हों ॥

(61) सौरमंडले सैन्यक्षेत्रे ।
औषधिक्षेत्रे तथैव च ॥
गणितस्य उपयोगे च ।
उपयुज्येते दैनंदिने ॥

कम्प्यूटर रौबौट का उपयोग
सौर मंडल सैन्य क्षेत्र औषधि ।
वा दैनंदिन में हो ॥

(62) नभात् पठितुम् शक्नोति ।
भूमौ हस्तस्थं पत्रम् ॥
अवश्यमेव उपयोगः ।
असाध्यरोगस्यौषधे ॥

आज उपग्रह के कैमरे हाथ में रखें
पत्र को भी पढ़ सकते हैं ।
इसलिए इनका उपयोग
असाध्य रोगों के उपचार में हो ॥

(63) अपरिमेया शक्तिः प्राप्या ।
भारपरिवर्तनात् ध्रुवम् ॥

भारः परिवर्त्तनीयः ।
शक्त्यर्थम् भारतीयैः ॥

आइन्सटीन के सिद्धांत के अनुसार
भार के परिवर्त्तन से अपरिमित शक्ति मिलती है ।
भारतीय भी बल के लिए
इस शक्ति का उपयोग करें ॥

साहित्य-क्षेत्रे

(64) अनुपयोगि साहित्यम् ।
जनाः इति कथ्यन्ते ॥
जनेष्टाय न साहित्यम् ।
कालयापनाय केवलम् ॥

साहित्य को अनुपयोगी
लोग कह रहे हैं ।
जन कल्याण के लिए साहित्य
नहीं लिखे जा रहे हैं बल्कि समय व्यतीत करने के
लिए लिखे जा रहे हैं ॥

(65) कस्यापि नैव प्रसीदाय
न वित्तोपार्जनाय हि
लेखनीयं तथाविधसाहित्यम्
यस्य पाठः सदा भवेत् ॥

न किसी को प्रसन्न करने के लिए

न वित्तोपार्जन के लिए ही लिखना चाहिए।

जिसको सब दिन पढ़े

ऐसा लिखना चाहिए ॥

(66) नद्यम्बुः कलकलं कुर्वन्।

सन्तुलयितुं यात्य अर्णवे ॥

रिङ्गत्तरङ्गः गगने भूमौ।

स्मिताः यथैव कामिनी ॥

नद्यम्बु कलकल करता-करता।

सागर में जाता सन्तुलनार्थ।

अठखेल करतीं लोल लहरें

हँसे सदा मही गगन में ॥

(67) जलावेगेन ध्वंसाः।

कूलाः दिशाविहीनाः ॥

अतृप्तकामानांः स्त्रीणां।

ज्वलनशिखेव कुण्ठितं हृदयम् ॥

सरिता वही उद्दाम बनती

तोड़ देती कूल।

स्त्री इच्छा अतृप्त कुंठित

ज्वलन शिखा अनुकूल ॥

दर्शन - विषये

(68) धनहीनः जीवितुम् नेच्छामि ।
नेच्छामि धन-वैभवम् ॥
इच्छामि धनहीनाय ।
किमपि दानम् धनार्जितात् ॥

धनहीन न जीना अच्छा
धन-वैभव भी दुखकर ।
थोड़ा सा धनहीन को देना
जो कमाई हो सके ॥

(69) मदिरापानम् नेच्छामि ।
इच्छामि पानस्य फलम् ॥
अनुगमनम् यथादिष्टम् ।
मम मस्तकः सदा नमितः ॥

मदिरापान न अच्छा
मदिरापन पर श्रेयस्कर ।
जैसे रहना पड़े रहें
मस्तक सदा नमित मगर ॥

(70) जलजो भासते जलद्दूरं ।
संपोषणाय जलमिच्छति ॥
मरुभूमौ गमनं ऋषये ।
स्वर्गार्गला इव दृश्यते ॥

जल में रहकर कमल है दूर
पर जीवन है जल से ।
मरुभूमि में गमन मगर
योगी को स्वर्गार्गला लगे ॥

(71) धनहीनः पीड़ितः धनेन ।
हन्यते रात्रौ न शेते ॥
आधिक्यं यदा प्राप्तं ।
जनस्याक्षिः परिवर्त्तेते ॥

धनहीन पीड़ित, धन में मारे जाते
रात को नींद न आती ।
ज्यों ही अधिक धन मिला
आँख बदल है जाती ॥

(72) सत्यवक्तुः अनुगामी ।
अल्पीयांसः एवं दृश्यन्ते ॥
असत्यवक्तुः पृष्ठगामिनः ।
प्रात्यन्ते वै पदे पदे ॥

सत्यवक्ता के साथ चलने वाले
बहुत ही कम होते हैं ।
मिथ्यावक्ता के साथ चलनेवाले
पग पग पर मिलते हैं ॥

(73) शंकराचार्याः तथा पोपाः ।
बुद्धावताराः पैगम्बराः ॥

प्रार्थयन्तु सर्वे गुरवः ।
ओम् शांतिः विश्वे यथा ॥

सभी शंकराचार्य, पोप
लामा तथा पैगम्बर ।
एक साथ मिलकर
विश्वशांति के लिए प्रार्थना करें ॥

(74) जनः जीवितेन श्राद्धेन ।
त्यजति विकारान् देहात् ॥
इत्युत मया श्रुतम् इच्छामि ।
परिष्काराय तेन विधिना ॥

जीवित रहते श्राद्ध करें
सभी विकारों को तजे ।
मैंने ऐसा सुना
ऐसा ही मैं भी करूँ ॥

(75) आगतः एकः गन्तुमस्ति एकः ।
मोदक्षणे च व्यथावहने ॥
सत्यम् न एकम् दृश्यते यत् ।
देवेच्छया सर्वं मा वद ॥

अकेला आना अकेले जाना
मोद-व्यथा क्षण भी अकेले ।
कुछ भी न सत्य जो दीख रहा है
सब भगवत्कृपा मत सोचो ॥

(76) सन्तोषिनः सुखिनः जगत ।
सन्तोषे सौख्यं च प्राप्यते ॥
सन्तोषः क्रमिके साफल्ये ।
वाधकः सर्वमनोरथे ॥

सन्तोष से सुखी प्राणी
सन्तोष से सुख मिले ।
सन्तोष ही क्रमिक सफलता में
मनोरथ में हमेशा बाधक है ॥

(77) जीवनस्यास्य किम् लक्ष्यम् ।
ब्रह्मानन्दस्य सदा प्राप्तिः ॥
यः करोति मनोयोगेन ।
लक्ष्यं प्रति सः समर्पितः ॥

जीवन क्या हो ब्रह्मानंद
जो भी करे मनोयोग से ।
लक्ष्य के प्रति सदा समर्पित ॥

(78) पारावतस्य प्राणरक्षा ।
स्व-आत्मा रक्षितो धर्मः ॥
पारावतं हच्वैव ।
सदास्ति श्येनस्याशनम् ॥

कबूतर करे निज प्राण की रक्षा
प्राणरक्षा ही उसका धर्म ।
मारे कपोत बाज की इच्छा
कपोत ही बाज आहार रहा ॥

(79) किं कर्म किमकर्मेति ।
जनाः सदैव शंकिताः ॥
सत्पथे सञ्चरणं तु ।
देवस्य सश्रद्धं पूजया ॥

क्या कर्म अकर्म का संशय
सदा पग पग पर आता है ।
सत्पथ पर चलना केवल
पूजाविनय से आता है ॥

(80) पूजय त्वं देवं पूज्यम् ।
श्रद्धया भक्त्या निष्ठंया ॥
उचितमनुचितम् कर्म प्रज्ञा ।
स्वयमेव अवाप्स्यति ॥

जो भी पूज्यदेव हों पूजो
श्रद्धा भक्ति निष्ठा से ।
उचित अनुचित क्या है
स्वयं ही पता चलेगा ॥

(81) दिवसाः व्यतीताः विमुखाः सर्वे ।
अद्यावधि मम अभवत् न कोऽपि ॥
वार्युर्वहति उदयति च चन्द्रः ।
गमनम् मया सदा सदैव ॥

दिन गुजरते गए सब मुकरते गए
आज तक मेरा हुआ न कोई ।
वायु वहे चंदा हँसे
मैं चला सदा सदा को ॥

(82) अनुभवामि लज्जामहम् ।
कृतं न मया महाजनेन कृतं ॥
कृतं न यच्छ्रेय: अद्यावधि ।
तत्कर्त्तव्यं साम्प्रतम् ॥
लज्जा का अनुभव हो
बड़े जनों सम कर न पाया ।
अच्छा काम न अब तक
अब भी तो प्रारंभ करें ॥

(83) गमनम् मरुभूमौ ।
सहभागी न कोऽपि ॥
ज्वलितौ पादौ ।
चल रे मनस् तथापि ॥
मरुभूमि में पैर जले
पर साथी न कोई ।
चलना रे मन
जब तक साँस चले ॥

(84) पतित्वा मरुभूमौ ।
समाधिरेव प्राप्स्यते ॥

गमनेन तु लभ्यं ।
लक्ष्यं कदापि ॥

मरुभूमि में गिरने से
समाधि ही मिलेगी ।
पर चलने से
शायद लक्ष्य मिले ॥

(85) शरीरे हि सर्वाणि तीर्थाणि ।
तीर्थाणि न गमनीयाणि ॥
देवावाहनम् न करणीयं ।
विनयाश्रितं केवलम् ॥

शरीर में ही सभी तीर्थ
तीर्थ स्थल को क्या जाना ।
देव आवाहन आवश्यक नहीं
केवल प्रार्थना सब का मूल ॥

(86) दुःखम् च दुर्भाग्यम् च ।
कदापि न त्याज्ये ॥
विनयः ददाति ।
शक्तिः संघर्षस्य ॥

दुख और दुर्भाग्य
कभी न जाए ।
विनय संघर्ष
की शक्ति दे ॥

(87) यदा जल-कणः नभे भ्रमति ।
प्राप्नोति घनः शीतलताम् ॥
भ्रमित्वा अनिलेन सह ।
प्राणान् देहे सञ्चारयेत् ॥

जल कण नभ में घूमकर
शीत बादल का रूप बने ।
पवन सह घूम-घूम कर
तन में प्राण संचार करे ॥

(88) अत्रैव आगच्छन्नासम् ।
आगतोऽस्मि अत्रैव च ॥
गच्छन्नस्मि तथा देशे ओम्-रूपे ।
गन्तुमस्ति गमिष्यामि विनयेन सह ॥

यहीं आना था आ गया मैं
जाऊँगा जहाँ जाना है ।
विनय अमृत सह जा रहा
विनय साथ कर अनेक रूप में ॥

(89) यथा नद्यः यान्ति समुद्रे ।
नद्याम् जलं नभात् यथा ॥
अर्णवात् वाष्परूपे गगने ।
चक्रवत् जीवनम् सदा ॥

नदी समुद्र में जाए
नदी में नभ से जल गिरे ।
समुद्र से वाष्प गगन को जाए
जीवन चक्र इसे कहे ॥

(90) तले तरंगाः ध्वनिताः ।
मध्यार्णवे न शब्दायन्ते ॥
हास्य-रुदने सुख-दुःखे ।
धी जनः मध्यार्णवेव हि ॥

तल में तरंग ध्वनित हैं
समुद्र गह्वर में शांति विराजे ।
हास्य-रुदन सुख-दुख सम
बुद्धिमान् समुद्र गह्वर की तरह ॥

(91) दुःखम् सोढुम् यदा क्षमता ।
मनः उद्विग्न न जायते ॥
दुःखस्य कारणम् ज्ञात्वा ।
स्वयमेव निवारयेत् ॥

दुख से निपटने की क्षमता
कभी मन उद्विग्न न होवे ।
दुख का कारण ज्ञात रहे
स्वयं निवारण पास रहे ॥

(92) अहं ब्रह्मा अहं नादः ।
अहं शक्तिः सर्वकेन्द्रे ॥

किमपि न असंभवम् भुवने ।
आत्मबलेन इच्छाशक्त्या ॥

मैं ही ब्रह्म मैं ही नाद
मैं ही शक्ति सभी जगह ।
कुछ भी नहीं असंभव जग में
आत्मबल इच्छा शक्ति द्वारा ॥

(93) कलह-युद्ध-जनकोऽहं ।
सदा अनर्थकारकः ॥
पुण्य-पाप-स्थापकः ।
सदा देहधारिने ॥

मै ही कलह युद्ध का जनक
सदा ही रहा अनर्थ कारक ।
पुण्य पाप का स्थापक
देह धारियों के लिए ॥

(94) पञ्चाशत् वर्षेभ्यः परम् ।
जनः भवति दार्शनिकः ॥
विविक्ते पूजा-पाठे ।
स्वयमेव आकर्षितः ॥

पचास वर्ष के बाद
मनुष्य दार्शनिक बन जाता है ।
अकेले पूजा-पाठ में
स्वयं ही आकर्षित होता है ॥

(95) सत्यस्य चन्द्रघनावृत्वमिव ।
रात्रौ जायते कदाचिदेव ॥
प्रयत्नम् सत्यावरणस्य ।
जनैः कदापि न फलेत् ॥

सत्य का चन्द्रमा की तरह बादल में
छिप जाना रात में कभी कभी है ।
सत्य को छिपाने का प्रयत्न
व्यर्थ है चन्द्रमा को बादल से निकल आने की तरह ॥

(96) दूर्वाः वात्यया सह ।
कदापि न उन्मूल्यन्ते ॥
तेनैव विपरीतकाले ।
संधिं कुर्यादथोचितम् ॥

दूर्बा आँधी में कभी न उखरे ।
विपरीतकाल में उसी तरह संधि करें ॥

(97) कालः गच्छतीति यः पश्यति ।
सः एव तिष्ठति भुवने ॥
अन्ये तु कालस्य गमनं ।
पश्यन्नेव तिष्ठति ॥

समय का बीतना जो समझता है
वही संसार में कुछ कर पाता है ।
और लोग केवल समय का बीतना
देखते रह जाते हैं ॥

(98) मनुम् अपश्यत् कालो ।

मनुजम् दनुजम् तथैव च ॥

युद्धम् अभवत् भवति भविष्यति ।

अवश्यच्च वा मृतमनुजम् ॥

काल ने मनु को देखा प्रथम मनुज को

तबसे लड़ते मनुज दनुज को ।

युद्ध हुए होते हैं होंगे

मरते देखा स्वयं अनुज को ॥

(99) दुःखम् सोढुम् यदाभ्यस्तः ।

दुःखम् सुखे जायते ॥

सुखस्य परिभाषा तत्र ।

दुःखस्य भाषा जायते ॥

दुख सहने का अभ्यस्त हुआ

दुःख सुख में बदल गया ।

सुख की परिभाषा वहीं

दुःख की भाषा बनी ॥

(100) दुःखितः भवतुम् नाधारः ।

पश्य कुसुमाग्रजस्य विहसनम् ॥

प्रस्फुटति विविक्ते सुगंधेन ।

विलसति शूलावृतम् वने ॥

दुखित होने का आधार नहीं
कलियों का हँसना देखो ।
सुगंध विखेरना वन में
काँटों से घिरे रहना ॥

(101) यदा गमनम् गमिष्यामि ।
हर्षोत्फुल्लः सन्तुष्टः ॥
सर्वेभ्यः यदि स्नेहः न प्राप्तः ।
अहमेव न कोऽपि दोषी अन्यः ॥

जब जाना है जाना हँसते
हर्ष के साथ सन्तुष्ट बना ।
सब का स्नेह मिला नहीं यदि
दोषी मैं ही और नहीं ॥

(102) दैवेन दत्तं जनाय च दुःखम् ।
दुःखादपि दुःखितः महत्तरः ॥
सोढुं न कोऽपि आगच्छति पार्श्वे ।
हा हा दुःखे दिवसाः व्यतीताः ॥

नियति ने लोगों को दुःख दिये
दुख को कोई बाँट न सका ।
दुख में जीवन बीता ॥

(103) कदा गमनम् न जानामि ।

स्वागतम् नतमस्तकेन ।
सवांदः हृदये प्रेषितः ॥

जाना कब जग से ज्ञात नहीं
पर जाना जग से निश्चित है ।
इसीलिए स्वागत नतमस्तक
संवाद हृदय में कुछ प्रेषित हो ॥

(104) सुखस्यानुभूति सदा हि दुःखे ।
आगतोऽस्ति सांध्यकालो यथैव ॥
गता नदी अर्णवेन मिलितुम् ।
केनापि हृतः न स्वजनस्य दंशम् ॥

दुख में सुख की अनुभूति
आ गई साँझ की बेला ।
नदी चली अर्णव से मिलने
आया न कोई दुख हरने ॥

(105) अविश्वसनीयानि सत्कृतानि ।
केन विधिना विपरीतानि ॥
अद्यापि न ज्ञातं मया ।
अकरणीयं किं किं कृतम् ॥

विश्वास नहीं सत्कर्म समय पर
क्यों काम नहीं आए ।
आज तक ज्ञात नहीं
अकर्म मैंने क्या किए ॥

(106) शरीरमेव मन्दिरम् ।
शरीरमेव पूज्यम् ॥
पूजकः आत्मा ।
शरीरम् रक्षणीयम् ॥

शरीर मंदिर शरीर पूज्य ।
आत्मा पूजक शरीर रक्षणीय ॥

अध्यात्म-विषये

(107) सम्पत्तिः शत्रुः विद्या वैरिणी ।
मार्दवमार्जवम् न प्राप्ते ॥
चेत् धनेनाधर्मः वा ।
अकर्म विद्यया यदा यदा ॥

धन शत्रु शिक्षा वैरी
मृदुता सरलता न आई ।
अगर धन से अधर्म हुआ
वा शिक्षा से अकर्म हुआ ॥

(108) पृच्छ पृच्छ हृदयान्तरम् ।
किल्विषं किं किं कृतम् ॥
नास्ति कोऽपि दंडको पार्श्वे ।
भवानेव नैयायिकः ॥

स्वयं हृदय से पूछो
क्या क्या अन्याय पाप किया ।
समीप में कोई दंड देने वाला नहीं
पापों का स्वयं न्याय करो ॥

(109) यः आत्मज्ञाताऽभवत् ।
सः भोगे न लिप्यते ॥
कः कस्यकस्मै कायं विहाय ।
विदेहत्वमवाप्स्यति ॥

जो आत्मा को पहचान लिया
उसे भोग न सतायेगा ।
कौन किसका किसलिए वह
देह से विदेह बन जायेगा ॥

(110) यः श्रृणोति अनाहतं नादं ।
सोऽहम् कथयितुम् सक्षमः ॥
महाव्याधौ वा शोके ।
समभावेन तिष्ठते ॥

जो अनाहत नाद सुने
देवत्व प्राप्त वह कह सके
महाव्याधि वा शोक में
समभाव वह सदा रहे

(111) मया श्रुतम् अर्द्धाधिकाः जनाः ।
हनिष्यन्ते सामीप्ये युद्धे ॥

कथं न पुनर्भवतु ।

अवशिष्टाः विचारयेत् ॥

सुना मैंने आधे से अधकि जन

2000 ई० के युद्ध में मारे जायेंगे

किस कारण से फिर न हो

जो बचें सोचें ॥

(112) पूजया पापानि नश्यन्ते ।

पापम् न करोतु कदाऽपि ॥

पूजा-फलम् नाश्नुते ।

पापानि कुर्वन् यः पूजयेत् ॥

पूजा से पाप का नाश

भविष्य में यदि पाप न करे ।

पूजा फल न मिले कभी

पाप करते पूजा करे ॥

(113) प्रथमं पापं न करोतु ।

शपथं न पुनः कर्त्तुं स्वीकुरु ॥

क्षमस्व कृतानि पापानि ।

भविष्ये न करिष्यामि ॥

पहले पाप न करो

शपथ न फिर करने का लो ।

किए पापों की क्षमा प्रार्थना

भविष्य में कभी न हो ॥

(114) जनः यदा यदा भ्रमितः ।
विनयेन प्राप्तमुत्तरम् ॥
किम् कर्त्तव्यं कुत्र गन्तव्यम् ।
उत्तरितम् सदा सदा ॥

जब जब जन भ्रमित हुआ
विनय से मिला उसको उत्तर ।
क्या करना कहाँ जाना
सदा मिला इसका उत्तर ॥

(115) किमपि न प्राप्तं प्राप्यं तथापि ।
विनयः ददाति सौख्यं जनाय ॥
दृश्यते न यद्यपि प्रत्यक्षम् ।
अन्तराक्षिना दृश्यते सदैव ॥

मिला न कुछ भी, पर मिलने बाला
विनय से सुख मन को हो शांति ।
प्रत्यक्ष रूप से कुछ भी न दीखे
अन्दर अन्दर अतीव सुखकर ॥

(116) यदा घृणा याति गगने ।
हन्तुम् विरोधिनमिच्छति ॥
हन्तुम् नेष्टं स्वविश्लेषणम् ।
विनयः पाठयति जनान् ॥

जब घृणा सीमा आकाश
सर फोड़ दे विरोधी पास ।
विनय सिखाती कभी नहीं
तुम में ही है दोष कहीं ॥

(117) विनयः न भौतिकसुखाय ।
न आर्थिकलाभाय च ॥
तथापि सर्वोत्तमसुखम् ।
ओम् शान्तिमवाप्नुयात् ॥

विनय न भौतिक सुख दे
न अर्थागम का श्रोत बने ।
तब भी सबसे उत्तम सुख
ओम् शान्ति की नींव बने ॥

(118) अदर्शनीयाः अश्रवणीयाः ।
अकरणीयाः क्षमस्व देवा ॥
परपीड़णम् मया यदि कृतम् ।
श्रोतुम् द्रष्टुम् नेच्छामि कर्तुं ॥

नहीं देखने सुनने करने योग्य जो
सब के लिए क्षमा प्रार्थना ।
अगर किसी को पीड़ा मुझसे
ऐसा सुनना देखना, करना वर्जित ॥

(119) सदा अनुभवामि ।
पश्यति कोऽपिमाम् ॥

चर्तुर्दिक्षु सर्वदा ।
कर्म यत् अहम् करोमि ॥
कोई मुझको देख रहा
ऐसा अनुभव सभी दिशा
जो भी करूँ, भय मुझे
उसका हो ॥

(120) धैर्यं देहि सोढुं मयि ।
संसारस्य विरोधस्य ॥
जनाः ज्ञास्यन्ति सत्कर्म ।
गते काले अनन्तरम् ॥

संसार विरोध की क्षमता
अगर चलना सत्पथ पर ।
लोग अवश्य ही जानेंगे
सत्कर्मों को मरने पर ॥

(121) दैवीगुणेन सह युद्धम्
व्यभिचारस्य जायते ।
युद्धे हि कुत्रापि न शान्तिः
निर्बलः वृक्षः उन्मूल्यते ॥
दैवी गुणों का संघर्ष
कदाचार के साथ सदा ।
इसी संघर्ष में उड़ जाते
निर्बल वृक्ष के मूल कदा ॥

(122) यदा पश्यामि पापं पुरतः ।

कर्त्तुम् किमपि न चेत् क्षमः ॥

नयनम् निमिल्य प्रार्थयामि ।

क्षमस्व यत् यत् भवेत् ॥

पाप अगर आँखों के आगे

क्षमता हो प्रतिकार नहीं ।

अच्छा ही हट जाना

क्षमा माँग ले पाप सभी ॥

(123) पूजा अंसंगता स्वजने ।

पूजयैव बलमाप्नुयात् ॥

पूजाविहीनः यदा भवेत् ।

चरित्रहीनः जायते ॥

स्वजन में पूजा असंगत हो

पर पूजा से बल मिलता ।

पूजा विहीन अगर हुआ

चरित्रहीन वह सदा सदा ॥

(124) जलमिच्छति अर्णवगमनम् ।

यदाधिक्यं अवाप्स्यति ॥

दुःखेः वै शक्तिहासः ।

उक्त्वा हृदयात् प्रतिकुरु ॥

जल का गमन सागर की ओर
रहे न इसका जब कुछ भी ठौर।
दुःख में चुप से शक्ति ह्रास
बोल इसे प्रतिकार करो॥

व्यवहारे (व्यवहारिकम्)

(125) मिथ्याम् मिथ्येति उक्त्वा।
वृथा वैरिणम् न निमंत्रयेत्॥
नैयायिकः न भवानस्ति।
दंडप्रक्रिया न भवतः क्रिया॥

मिथ्या को मिथ्या कहकर
व्यर्थ न शत्रु बनाना।
न्याय करना जब क्षेत्र नहीं
न दंड देना, न भुगतना॥

(126) सर्वेभ्यः न सुलभः न्याय।
दुर्जनेभ्यः सुलभः सदा॥
आसन् सन्ति भविष्यन्ति।
नैयायिकाः युगे युगे॥

सबको न्याय सुलभ नहीं
दुर्जन को मनमानी करना।
रहे हैं रहेंगे दुर्जन तथा
नैयायिक भी सभी युग में॥

(127) कदापि न दुःखं परिहर्त्तव्यम् ।
चेत् वदतु परिजनान् प्रति ॥
परिजनाः न स्वीकरिष्यन्ति ।
दुःखस्य वर्धनम् केवलम् ॥

दुःख का हरण न हो सकता
अगर परिजन से बोल सके ।
परिजन कभी न बाँटेंगे
और दुःख बढ़ेगा कहकर ॥

(128) त्यजन्ति सर्वे असंगतान् ।
विपदि काले आगते जनान् ॥
आत्मबलम् यदि दृढम् ।
जनस्य सुहृत् पदे पदे ॥

असंगत को तजते सभी
विपत् काल में स्वजन भी ।
आत्मबल यदि दृढ किए
जन का मित्र पग पग पर ॥

(129) किमाराध्यम् केन विधिना ।
आराधकः कः अस्मिन् युगे ॥
कर्त्तव्यं यदि कर्म रात्रौ ।
क्षुधाभरणाय केवलम् ॥

किसकी पूजा, किस विधि से
आराधक कौन इस युग में ।
रात में करना पड़ता है काम
पेट भरण के कारण जब ॥

(130) जगत्परिवर्तनम् न संभवम् ।
चेदिच्छति कर्त्तुम् परिवर्तनम् ॥
भूताः सन्ति भविष्यन्ति ।
भवान् इव कतिपयजनाः ॥
अकेले जगपरिवर्तन असंभव
अगर आमूल परिवर्त्तन करना है ।
हुए हैं होंगे आपकी तरह
इस जग में कितने मानव ॥

(131) भवान् वदति कः श्रोष्यति ।
उच्चैः स्वरैः तु विविक्तेभुवि ॥
कोऽपि कदापि नागन्तुकः ।
चेत्त् प्राणैः कंठगतैरपि ॥
आप बोले कौन सुनेगा
छागल रव को कौन सुने ।
समीप न कोई आनेवाला
अगर प्राण भी जाता जाए ॥

(132) म्लेच्छाः यवनाः हूणाः ।
नाभवन् भारते भारतीयाः ॥

जेतृपराजितयोः मैत्री ।
न अभवत् न भविष्यति ॥

म्लेच्छ यवन हूण भारत में
रहकर भारतीय अब भी न हुए ।
जीते हारे की मैत्री
न हुई, न कभी होगी ॥

(133) अपशब्देन जनाचरणम् ।
स्वयमेव परिभाष्यते ॥
श्रोता न अपशब्दस्य पात्रम् ।
पात्रम् वक्ता एव हि ॥

अपशब्द से मनुष्य के आचरण
का स्वयं पता चल जाता है ।
गाली के पात्र श्रोता से
अधिक वक्ता होते हैं ॥

(134) केन विधिना कार्यसिद्धिः स्यात् ।
पाठ्यते अस्मिन् युगे ॥
तेनैव विधिना करणीया ।
प्रगतिः सदा भारतीयैः ॥

किस तरह कार्यसिद्धि हो
यही पाठ पढ़ाया जाता है ।
भारतीय भी उसी तरह
निरन्तर प्रगति को प्राप्त करें ॥

(135) येन केन प्रकारेण ।
साफल्यं यः प्राप्नुयात् ॥
सः वक्ता सः गुणज्ञः च ।
तस्मिन् गुणाः समाश्रिताः ॥

जिस किसी तरह से
जिसने सफलता पाली ।
वही वक्ता गुणज्ञ बन गया
सभी गुणवाला कहलाता है ॥

(136) यः साफल्यं न प्राप्नोति ।
चेत् विद्वज्जनः महान् ॥
सः अकुलीनः हास्यास्पदः ।
समाजे न समादृतः ॥

विद्वान् भी अगर सफलता
न प्राप्त कर सकें तो अकुलीन ।
हास्यास्पद तथा समाज
द्वारा अनादृत हो जाते हैं ॥

(137) सफलः कथ्यते श्रेयान् ।
असफलः मूर्खो जायते ॥
जनः सः एकः एव परम् ।
उपनामतु पृथक् पृथक् ॥

जीते बाबू कहलाये
हारे भूतहा नाम ।
जन तो था पर एक ही
अलग अलग उपनाम ॥

(138) प्रीतिम् अलम् तदा विद्धि ।
अनिष्टं खलु आमंत्रयेत् ॥
अवश्यमेव आबद्धः भविष्यति ।
दूरमपसर तथा समये ॥

करे खुशामद ज्यादा
समझो आफत आई ।
कहीं उलझ जाओगे
दूर हटो ही भाई ॥

(139) समर्थयेत् यो पूर्णवाक्यं ।
"न न" कदापि न उच्चरेत् ॥
उपधारय कार्यम् तत् ।
कदापि न भविष्यति ॥

"हाँ हाँ" करे कथन में
समझो काम न होगा ।
"ना ना" नुक्ता चीनी
समझो काम वहाँ ही होगा ॥

(140) समर्पितः भवतु पूर्वम् ।
नमनं कुरु शतबारम् ॥

क्षमस्वेति यदा कथयिष्यसि ।
वृत्तिम् तदैव प्राप्तनुयात् ॥

पहले घुटने टेक दो
करो नमन सौ बार ।
भूल हुई क्षमा करें
मिलेगा तभी पगाड़ ॥

(141) दृश्यते असंभवम् कार्यम् ।
यदा संभवम् जायते ॥
आसीत् सुलभम् कार्यम् ।
अन्विच्छ गुरुतरं कर्त्तुम् ॥

लगे कार्य जो असंभव
होने पर प्रसन्नता इतनी ।
अरे, कितना सुलभ था
और बड़ा करना है ॥

(142) क्षुधापीडिताय धनवद्भिः ।
किमपि न दानं दीयते ॥
धनवाद्धनहीनयोः मैत्री ।
धनहीनस्य विपरीते हि ॥

क्षुधापीड़ित को धनवान
कुछ भी दान नहीं देता ।
धनवान धनहीन की मैत्री
धनहीन के विपरीत होती है ॥

(143) प्राणदानाय छागस्य विनयः ।
व्याघ्रेण सदा उपेक्षितः ॥
व्याध्रः तत्र न तुष्णीं तिष्ठेत् ।
त्यजेत् क्षुधितः किं भोजनम् ॥

छागल माँगे भीख व्याघ्र से
प्राण न उसके लेना !
व्याघ्र सुने चुपचाप कथा क्यों
छोड़े मिले चबेना ॥

(144) पश्यति कः सम्प्रतिष्ठाम् ।
गगनचुम्बिसदनं प्रति दृष्टिः ॥
नानुभवति वाहनम् ।
नमस्करोमि पुनः पुनः ॥

नीचे नींव को कोई न देखे
दृष्टि गगनचुम्बी की ओर ।
बोझ उठाना कोई न देखे
नमन उसे सैकड़ो बार ॥

(145) धनवान् नपश्येत् साधनम् श्रेयः ।
पापं धनार्जने यद्भवेत् ॥
यदा धनमर्जितम् विपुलम् ।
लक्ष्मीपूजनाय मंदिरम् ॥

धनी न देखे साधन श्रेय
पाप धनार्जन में चलता ।
धन अर्जन जब अधिक हुआ
लक्ष्मी मंदिर वहाँ बनता ॥

(146) सोढुम शक्तिः तीव्रतरा ।
तीव्रा आक्रामकस्य हि ॥
प्रथमं सहनम् तदाक्रमणम् ।
शक्तिः तत्रैव तीव्रतमा ॥

सहने की शक्ति तीव्रतर
आक्रामक की तीव्र है ।
पहले सहना पुनः आक्रमण
वहाँ ही शक्ति तीव्रतम ॥

(147) अद्य असफलो जातः ।
श्वः खलु सफलो भवेयम् ॥
श्वोऽपि न सफलो जातः ।
परश्वस्तु अवश्यमेव ॥

आज अगर असफल हुआ
कल सफल होना है ।
कल भी अगर असफल
परसों सफल होना है ॥

(148) नारिकेलः सदा स्थिरः ।
जम्बु वृक्षः उन्मूल्यते ॥

क्रोधं सहते सज्जनः ।

दुर्वाक्येन न विचलति ॥

नारियल स्थिर रहे

जामुन आँधी में गिरे ।

क्रोध सहन सज्जन करे

न दुर्वाक्य से विचलित कभी ॥

(149) भवता सहैव न दुःखम् ।

सहन शक्तिं दृष्ट्वा वै ॥

महानात्मा सदा सहते ।

दुर्वचनम् दुर्जनस्य हि ॥

आपके साथ है दुःख नहीं

दुर्जन के दुर्बचन सहे ।

महाजन सदा सहते हैं

दुर्जन के दुर्वचन सभी ॥

(150) अर्णवस्य तले जाताः ।

महानादाः मुखरिताः ॥

अन्तः शान्तिः विराजते ।

तेनैव दुःखं विभाजितम् ॥

समुद्र सतह पर घोर निनाद

सुनते हैं अहर्निश नाद ।

अन्दर अविकल शान्ति विराजे

इसी तरह दुख का विभाजन ॥

(151) सर्वजनानां प्रसीदनम् ।
भुवि कदापि न संभवम् ॥
सर्वजनान् प्रसीतुं चेत् ।
एको नापि प्रसीदति ॥

सभी जनों को खुश करना जग में सदा असंभव है ।
सभी जनों को खुश करने में एक जन भी खुश होता नहीं ॥

(152) एकस्मिन् काले मूर्खनिर्माणं ।
कश्चन्नापि कर्त्तुम् सक्षमः ॥
पुनः पुनः प्रयत्नेनैव ।
स्वयं मूर्खो जायते ॥

एक समय ही मूर्ख बनाना
जग में कहीं कर सकते ।
बार बार प्रयत्न करने पर
स्वयं मूर्ख बन जाते ॥

(153) अलाभे न उद्विग्नः ।
पुनः व्यवसाये संलग्नः ॥
तदैव नरः समृद्धः ।
अलाभोऽपि जायते ॥

हानि में उद्विग्न नहीं
फिर व्यवसाय में लग जाय ।
वही नर समृद्ध होगा
अलाभ भरपाई कर पाए ॥

(154) स्वार्थपेक्षी स्वकर्त्तव्यात् ।
सर्वथा विमुखो भवेत् ॥
मैत्रीं प्रत्यक्षरूपेण ।
पश्चात् क्षिप्रेण घातयेत् ॥

निज स्वार्थ साधनेबाला
कर्त्तव्य से विमुख होगा ।
प्रत्यक्ष रूप से मैत्री
अन्दर से घात करेगा ॥

(155) प्रियं वदेत् स्मितं वदेत् ।
वदेत् किमपि न अनर्थकरम् ॥
घातके आगते काले ।
कुशलक्षेमेन तोषयेत् ॥

प्रिय बोलो मुस्कुरा बोलो
पर अनर्थकारी कभी नहीं ।
आ जाए यदि मारनेवाला
पूछ कुशल क्षेम तुष्ट करो ॥

(156) आगच्छति एकदा कालो ।
भवन्ति सर्वे वैरिणः ॥
सर्वे विघ्नाः विनश्यन्ते ।
अवश्यमेव गते काले ॥

एक समय ऐसा भी आए
सारा जग वैरी हो जाए ।

समय बदलते देर नहीं
सभी विघ्न हों दूर वहीं ॥

(157) नैराश्ये न असामान्यं ।
भविष्येऽत्र कदापि भवेत् ॥
असाफल्ये कार्ये अपि ।
पुनः कर्त्तुम् क्षमः लभेत् ॥

निराशा में असामान्य नहीं
भविष्य में कभी निराश नहीं ।
असफलता आती जाती है
फिर करने की क्षमता हो ॥

(158) धने आगच्छन्ति मित्राणि ।
निर्धनात् भयं दूरम् ॥
धनार्जनम् सुसाधनेन ।
कोऽपि विरलः प्राप्नोति ॥

धन में आवें मित्र सभी
निर्धन से भयः दूर रहे ।
अच्छे साधन से धन दूर
कोई कोई ही प्राप्त करे ॥

(159) छल-छद्म-गर्हितेन साधनेन ।
साफल्यं यदि प्राप्यते ॥
अवश्यमेव अधोगामी ।
सः भविष्ये काले ॥

छल छद्म गलत साधन से
अगर कहीं जो सफल बने ।

उसका पतन अवश्य ही आगे
चाहे जितना कर ले जोर ॥

(160) धनार्जने न स्वीकार्यं ।
मार्दवम् वा आर्जवम् ॥
दातुम् कोऽपि नेच्छति ।
रूप्यकस्य खण्डोऽपि भिक्षुकाय ॥

धन अर्जन में मृदुता
सरलता का स्थान नहीं ।
नहीं खुशी से देता कोई
रुपए का हिस्सा भी भिक्षुक को ॥

(161) कार्यनिष्पादने विलंबः ।
वा कदापि दीर्घससूत्रता ॥
न कर्तुम् यः इच्छति ।
तस्य सर्वकथनम् मिथ्या ॥

कार्य निष्पादन में विलंब करे
या कार्याधिक्य दिखलाए ।
जो न करना चाहे उसकी
ये सारी बहानेबाजी है ॥

(162) ऋणं दानं किमुपकारम् ।
अधमर्णत्वं जायते ॥
ऋणं त्वरितं देयं ।
अन्यथा वर्धते सदा ॥

ऋण देना उपकार नहीं

क्योंकि वापस मिल जाता ।

ऋण तुरंत लौटा दें

अन्यथा बढ़ता जाता ॥

वस्तुःपरकाः

(NAKED-REALITY)

(163) श्रमिकाः सर्वे उद्योगे ।

पीड़िताः रोगैः सदा ॥

धनमाप्नोति परित्राणाय ।

शेषं क्षुधाभरणाय च ॥

श्रमिक सभी उद्योगे में

पहले जकड़े रोग ।

रकम मिले इलाज को

पेट पहले सँजोग ॥

(164) जीवनस्तरम् अधोगामि ।

हस्ताभ्याम् यदि क्रियते ॥

तेनैव ग्राह्यं लोकैः ।

यन्त्रं वाहनम् सदा सदा ॥

जीवन स्तर घट जायेगा

हाथ करे यदि काम ।

इसीलिए तो वाहन है

हर घर का उपनाम ॥

(165) रक्तेन यदि धनमाप्नोति ।
वा अन्येन अशास्त्रसम्मतैः ॥
अर्जितधनात् स्वल्पम् दानम् ।
स्वजनाय परिजनाय च ॥

लहू से भी धन अर्जन कर
वा अनैतिक तरीके से ।
अर्जित धन से थोड़ा हिस्सा
बाँटना अपने परिजनों में ॥

(166) क्षुधितानः बालकान् दृष्टवा ।
धनवन्तः प्रसीदन्ति ॥
महादानम् यदा कृतम् ।
श्वानाय ददाति अशनम् ॥

भूखे बच्चे देख के
धनी प्रसन्न हैं होते ।
बहुत बड़ा दान करना
सम कुत्ते को रोटी देते ॥

(167) न पुरातनम् त्याज्यम् ।
नूतनं सदा ग्राह्यम् ॥
नूतने पुरातने संधिं ।
युगे सदा समाचरेत् ॥

पुरातन का त्याग नहीं
नूतन से अनुराग वहीं ।

नूतन पुरातन में सामंजस्य

युग युग की यही पुकार ॥

(168) उद्योगाः पूजागृहभूताः ।

कार्यकारिणः पूजकाः ॥

मासिकम् पूजाफलम् ।

कर्त्तव्यम् पूज्यदेवः ॥

सभी उद्योग पूजा गृह

काम करने वाले हैं पूजक ।

पूजाफल है मासिक

कर्त्तव्य ही हैं पूज्य देव ॥

(169) पुनः पुनः पठिता गीता ।

शब्दार्थान् जानामि ॥

न भावार्थान् जानामि ।

कृष्णानुकम्पया केवलम् ॥

गीता का पढ़ना बार बार

पर शब्दार्थ ही जान सका ।

भावार्थ न कुछ भी अबतक

कृष्णकृपापात्र जो हो ॥

(170) धीः धृतिः सोढुम् दुःखम् ।

आत्मबलम् सुकृतेन च ॥

त्यजन्ति सर्वे विपदि काले ।

विश्वसनीयाः स्वगुणाः ॥

ज्ञान धैर्य से दुःख सहना
आत्मबल अच्छे कर्म द्वारा ।
विपद काल में सब त्यागे
अपने गुण पर विश्वास रहे ॥

राजनीति–विषये

(171) साम्यवादस्य स्वप्ने ।
अपराधः इव उच्यते ॥
करोतु दीनं दीनतरम् ।
पूँजीवादः वर्द्धते ॥

साम्यवाद में स्वप्न देखना
समझा जाता अपराध ।
दीन बनाओ दीनतर
यही पूँजी का राज ॥

(172) क्षुधाकारणेन म्रियन्ते ।
अद्यापि लक्षशः जनाः ॥
अन्नमूल्यं न्यूनतां गच्छेत् ।
अन्नम् त्यक्ष्यन्ति अर्णवे ॥

क्षुधा कारण से आज भी
मरते हैं लाखों जन ।
अन्न भाव घट जायेगा
अन्न फेंकते वारिधि जन ॥

(173) प्रथमं ताड़येत् ततः त्राणम् ।
जीवितुम् किमपि देहि ॥
पूँजीवादः पाठयति ।
कुरु बुद्धिहीनम् बुद्धियुक्तम् ॥

पहले घायल, फिर दवा करो
जीने हेतु कुछ दे दो ।
बुद्धि वाले की बुद्धि ले लो
यही पूँजीवाद का पाठ रहा ॥

(174) अद्यापि कोटिशः पुरुषाः ।
हन्यन्ते अहम् कारणेन ॥
कुत्राऽपि अधिनायकराज्ये ।
साम्यवादे तथैव च ॥

आज भी करोड़ों लोग
अहम् कारण से मारे जाते ।
अधिनायक वाद में मरे
वा साम्पवाद में मारे जायें ॥

(175) बुद्धधर्मः विदेशेऽपि ।
अद्यापि पूजितः जनैः ॥
यवनैः ध्वंसानि मंदिरानि ।
न ग्राह्यं त्याज्यम् सदा ॥

बुद्ध धर्म विदेश में भी
आज तक पूजित रहा ।

यवनो ने मंदिर तोड़े
इसीलिए है त्याज्य रहा ॥

(176) उर्दू यवनसैनिकानाम् ।
भाषेति अद्यापि न ग्राह्या ॥
आंग्लभाषा सौम्येन ।
भारतीयैः जनैः ग्राह्या ॥

उर्दू यवन सैनिक भाषा थी
इसीलिए हुई ग्राह्य नहीं ।
अंग्रेजी अपनी मृदुता कारण
भारतीयों को ग्राह्य हुई ॥

(177) लालकिलाताजमहलयोः ।
रक्तस्वराः प्रतिध्वनिताः ॥
तिष्ठतु सदा नेपथ्ये ।
दर्शनम् स्वतंत्रतादिवसे ॥

लाल किला ताजमहल में
रक्तध्वनि मुखरित होती ।
इसीलिए रखना नेपथ्य में
स्वतंत्रता दिन में ही देखें ॥

(178) अधिकार्यदेशेन ।
"बमम्" पातितम् एकेन जनेन ॥
लक्षजनानाम् मृत्युरभवत् ।
वाविक्षिप्ताः जाताः ॥

अधिकारी आदेश से
किसी ने बम गिराया।
लाखों लोग मरे तुरत
या विक्षिप्त बौराया॥

(179) दस्युकार्येण धनं प्राप्य।
प्रेषितं पुनर्वासाय च॥
ज्ञात्वा युद्धवीरोऽस्ति।
कारावासात् मुक्तः कृतः॥

डकैती से धन जुटा
लोगों का पुनर्वास करो।
जेल गया प्रसन्नता से
युद्ध वीर है "निकाला जेल बाहर॥

(180) ज्वलितानाम् जनानाम्।
रोदनं श्रृणोति क्षणे क्षणे॥
तेनैव ज्वालिताः तथापि।
अद्यापि मानवत्वम् जीवितम्॥

जलते लोगों का क्रन्दन
सुनता था वह हर क्षण।
उसी ने लगे जलाया
आज भी मानवता जीवित॥

(181) शोधोत्पन्नं यन्त्रविज्ञानम्।
सुलभम् स्यात् सर्वराष्ट्रेभ्यः।

शक्तिप्रयोगः अक्षम्यः ।
यदि मानवत्वस्य विनाशकः ॥

शोध से उत्पन्न जो तकनीकी
सभी राष्ट को सुलभ रहे ।
शक्ति प्रयोग अक्षम्य अपराध
अगर मानवता का विनाश हो ॥

(182) मानवत्वस्य विनाशकाः ।
बमेन सह राकेटाः ॥
प्रतिद्वन्द्वी यदि समकक्षः ।
युद्धम् तत्रैव विवर्जयेत् ॥

मनवता का विनाशक
बम के साथ राकेट हैं ।
विरोधी अगर बराबर है
तभी युद्ध है टल सकता ॥

(183) नाधिकारः नाशस्य ।
मानवत्वस्य बमेन सह ॥
अवश्यमेव दण्डः मिलेत् ।
मानवत्वस्य विनाशकाय ॥

मानवता नाश अधिकार नहीं
बम वा किसी तरह ।
अवश्य नाशक को दंड मिले
जो मानवता का विनाश करे ॥

(184) वैयक्तिकेन जीवनेन ।
अध्यात्मेन दर्शनेन च ॥
अहिंसका: प्रहारे अक्षमा: ।
वयं युद्धे पराजिता: ॥

वैयक्तिक जीवन और
अध्यात्म दर्शन के कारण ।
अहिंसक प्रहार में अक्षम
हम युद्ध में हार गए ॥

(185) शरीरेण वयं दुर्बला: ।
यवना: भीमाकारा: ॥
अद्य: शरीरम् अविचारणीयम् ।
स्याम: श्रेष्ठा: शस्त्रास्त्रेण ॥

शरीर से हम कमजोर थे
यवन लोग तगड़े थे ।
आज शरीर अविचारणीय
हम श्रेष्ठ रहें अस्त्रशस्त्र से ॥

(186) सहस्त्रवर्षेषु कालेषु ।
इस्लाम: त्वरितेन स्थापित: ॥
सनातन: हिन्दूधर्म: ।
कदापि न विस्थापित: ॥

एक हजार वर्ष में

इस्लाम अभी आया है ।
हिन्दु धर्म सनातन है
सदा सनातन रहेगा ॥

(187) इस्लामस्यझंझावते ।
केन विधिना जीवित: ॥
प्रहारेण हिन्दूधर्म: ।
आश्चर्यविषयो ह्यम् ॥

इस्लाम के झंझावत में
हिन्दु धर्म कैसे बच गया आश्चर्य का विषय है ॥

(188) इस्लामस्य झंझावाते ।
अर्द्धविश्वम् समावृत्तम् ॥
आगते गंगाभूमौ ।
वेग: गंगोदके गत: ॥

इस्लाम के झंझावत में
आधा संसार समा गया ।
गंगा क्षेत्र में आने पर
वेग लहर में मिल गया ॥

(189) सहस्त्रवर्षेषु: वयं दासा: ।
जातिवादैक कारणात् ॥
अवश्यमेव पाठयितव्या: ।
राज्यकोषेन सर्वे बाला: ॥

हजार वर्षों तक हमदास रहे

जातिवाद से विभाजित रहने के कारण ।

अब भी भविष्य में जातिवाद उन्मूलन

के लिए सभी बच्चे राज्य कोष से पढ़ाये जाएँ ॥

(190) राजनीतौ न कोऽपि मित्रम् ।

नैव कोऽपि शत्रुः परम् ॥

अद्य मित्रम् श्वः विरोधी ।

विरोधी मित्रम् जायते ॥

राजनीति में न कोई मित्र

न कोई शत्रु सब दिन के लिए होते ।

आज के मित्र कल विरोधी

विरोधी मित्र हैं बन जाते ॥

नीतिविधिविषये

(191) के महन्तःमानवाः ।

अब्राहमः गान्धी तथा ॥

सन्ति अन्येऽपि पंक्त्याम् ।

नेहरू, चर्चिलः केनेडी ॥

कौन बड़े हैं लोग

अब्राहमलिंकन गाँधीजी ।

नामावली में और भी

नेहरू एटली केनेडी ॥

(192) प्रथमः हतः जनेष्टाय ।
विक्षिप्तजनेन द्वितीयः ॥
नेहरू एटली पूजितौ ।
जनाधार संचालकौ ॥

लिंकन लोग भला हो मारे गए
विक्षिप्त के द्वारा गाँधीजी ।
नेहरू एटली पूजित हैं
जनाधार के कारण ही ॥

(193) स्टालिनहिटलरमाओ प्रमृतयः ।
कदापि नैव मानवाः ॥
जीविते न विरोधिनः ।
मृते घृणापात्राणि सदा ॥

स्टालिन हिटलर माओ
कभी भी मनुष्य नहीं ।
जीवन भर न कोई विरोधी
मरने पर घृणा पात्र हुए ॥

(194) नैव उपदेशकाः न्यूनाः ।
नैव किल्विषकारकाः ॥
बुद्धश्च शंकराचार्यः ।
भूताः चैव भविष्यन्ति ॥

उपदेशक कभी न कम हुए
पर न कम अनिष्ट कारक हुए।
बुद्ध शंकराचार्य होते रहे
भविष्य में भी होते रहेंगे ॥

(195) लाभार्थम् व्यवसायः।
कदाचारेन कदापि न ॥
येन केन प्रकारेण प्राप्तं।
धनम् राज्येन हृतम् ॥
व्यवसाय लाभ के लिए
पर कदाचार से कभी नहीं।
कदाचार से जो धन मिले
राज्य उसे ले ले ॥

(196) सद्यः पतनं सिद्धान्तपथिकस्य।
प्रतीयते कार्यं कुर्वतः ॥
भयम् जायते क्षणिकम्।
प्रज्ञा भ्रमिताः प्रतीयते ॥
सिद्धान्त पथिक का पतन
कर्त्तव्य करते हुए सदा लगता है।
क्षणिक भय का अनुभव
बुद्धि भी भ्रमित लगती है ॥

(197) कस्यचित् दुःखेन दुःखितः।
चेत् स्वयं अनुभूतः ॥

चिन्तनीयं केन विधिना ।

किमपि दुःखम् निवारयेत् ॥

किसी के दुःख से दुखित होना

अगर वैसा स्वयं पर ले ।

किस तरह निवारण हो

यही सोचना चाहिए ॥

(198) प्रहारकप्रहारितयोः मध्ये ।

मम हृदयम् प्रहारितेन सह ॥

पीड़ा प्रहारितस्यांगस्य ।

ममांगे समावृता ॥

प्रहारक तथा प्रहारित के बीच

मेरा हृदय प्रहारित के साथ ।

प्रहारित के अंग की पीड़ा

लगे अपने अंग के साथ ॥

(199) पाठकाः न ध्यायन्ते ।

अतुकान्ते हिन्दीकाव्ये ॥

लैखकैः लिख्यते तच्च ।

पठ्यते तेन केवलम् ॥

अतुकान्त हिन्दी कविता पर

पाठक ध्यान नहीं देते हैं ।

लेखक लिखते हैं और स्वयं पढ़ते हैं ॥

(200) संस्कृतशब्दाः अविकलेन ।

हिन्दीभाषायाम् व्यवहृताः ॥

तथापि अतुकांतकाव्येन ।

हिन्दीभाषा अशोभिता ॥

संस्कृत शब्दों का अविकल प्रयोग

हिन्दी में होता है, फिर अतुकांत ।

हिन्दी काव्य का कोई औचित्य नहीं है ॥

(201) लेखनम् न क्षुधाभरणाय ।

नैव वैभवकारणम् ॥

हिन्दीसंस्कृतयोः कोऽपि ।

आंग्लभाषा विपरीता हि ॥

लेखन से क्षुधा भरण नहीं

न धन कारण बन सकता ।

हिन्दी संस्कृत वा कोई भी

आंग्ल भाषा विपरीत है ॥

काव्यलेखनम्

(202) शशी घने विचरति घनाः ।

पवनवेगेन इतस्ततः ॥

शैशवे निर्निमेषं दृष्टं ।

तारकदलं गगने मया ॥

शशि घन में लुक छिप तिरते बादल
पवन वेग से गगन चीरकर ।
देखा करता था बचपन में
निर्निमेष तारक दल नभ उर ॥

(203) गगनाश्रिताः तारकाः ।
उल्काः पतन्ति केवलम् ॥
ब्रह्मांडस्य कः आधारः ।
भ्रमन्ति रविशशितारकाः ॥

गगनाश्रित तारक दल इतने
केवल होता उल्का पात ।
ब्रह्मांड टिका किसके बूते
घूम रहा रवि शशि दिनरात ॥

(204) सस्वरं वेदपाठाः ।
आकर्षन्ति स्म शैशवे ॥
कोऽपि अर्थः ज्ञातः न ।
पाठाय मनः तत्परम् ॥
बचपन में वेदऋचाएँ का पाठ
सुनने को मिलता था सस्वर ।
समझ न पाता कुछ भी लेकिन
मन ललचता पाठ करें स्वर ॥

(205) श्रुतम् गानम् गायकस्य ।
मनोयोगेन छन्दसि लये ॥

चेत् गायकः लेखकः ।
वा अहमेव लेखकः ॥
गायक सस्वर गान करे जब
सुना चाव से सुर लय तान ।
गायक रचनाकार बताता
बनता उत्सुक गाता गान ॥

(206) कदापि न लिखितुमचिन्तयत् ।
नैव संस्कृतभाषायाम् श्रृणु ॥
लिखिताः श्लोकाः शैशवे ।
लिखामि किमपि इतस्ततः ॥
लिखना कभी न सोचा था
संस्कृत भाषा में और नहीं ।
बचपन में श्लोक लिखे थे
अब लिखना है इधर उधर से ॥

(207) जन्मतः पूर्वं परं वा ।
भारः यः ज्ञायते मया ॥
"आक्षरी" पुस्तकम् लिखित्वा ।
भारो मे अधोगतः ॥
जन्म से पहले वा बाद
जो बोझ बन गहराता था ।
आक्षरी पुस्तक लिख देने से
सारा बोझ उतर गया ॥

(208) आदिशंकरेण लिखितं तावत् ।
लिखितुम् किमपि न शेषम् ॥
तथापि मया लिखितम् ।
प्रसारकार्याय केवलम् ॥

आदि शंकर ने लिखा इतना
लिखना कुछ भी शेष नहीं ।
तथापि मेरा लिखना
प्रसार कारण बस यहीं ॥

(209) हिन्दीभाषायाम् मम ।
प्रकाशितः काव्यसंग्रहः ॥
"व्याख्यायितः" यत्र तत्र सर्वत्र" ।
"महाप्रयाणः" इति स्मृतः ॥

हिन्दी में मेरे प्रकाशित
काव्य संग्रह व्याख्यायित
यत्र तत्र सर्वत्र और महाप्रयाण है ॥

(210) मया न पठितः उपन्यासः कदापि ।
नास्ति धैर्यं ।
पठितुम् कदापि ॥
उपन्यास न पढ़ा कभी
न पढ़ने का धैर्य रहा ।

महाप्रयाणम्

(211) नाना-विध-प्रकाशितम् ।
नाना-रंगैः शोभितम् ॥
पश्यामि निर्निमेषं ।
आगच्छन्नस्ति यानम् ॥

विविध विध प्रकाशित
विविध विध रंग से शोभित ।
आ रहा है यान देखूँ
अपलक नयनों से पुनः पुनः ॥

(212) हर्षातिरेकेन रोमाः ।
दिव्यानुभूतिः अन्तरे ॥
इष्टं सदा प्रार्थितम् ।
स्वागतम् नतमस्तकेन ॥

रोम हर्ष से पूर्ण है
दिव्य अनुभूति अन्दर में ।
चिरभिलषित जीवन भर
उसके आगे नत मस्तक ॥

(213) वने पुष्पितः पल्लवितः ।
देवदारः द्रुमायते ॥
प्रसन्नम् हर्षितं मनः ।
आतुरोऽस्मि गमनाय ॥

वन में फूल खिले हैं
देवदार वृक्ष भी दीखे ।
मन प्रसन्न हर्षित है
पूर्णरूपेण गमन तत्पर ॥
(देवदार वृक्ष मनु शतरूपा को सर्व प्रथम मिला था)

(214) मन्थरगत्या मुहुर्मुहुः ।
आगच्छन्नस्त मम द्वारे ॥
आमंत्रयति गन्तुम् किन्तु ।
कर्त्तव्यम् अद्यापि शेषम् ॥

मंथर गति से यान
आ रहा है महाप्रयाण ।
आमंत्रण चलने का
पर कर्त्तव्य शेष महान ॥

(215) नृत्यगीतदुंदुभिवाद्यैः सह ।
इच्छामि स्वप्ने भ्रमणम् ॥
न भुवनस्य कुंठा पीडा यत्र ।
न आधिः व्याधिः तथा ॥

नाच गान दुंदुभि के साथ
इच्छा हो रही है स्वप्न में भ्रमण करें ।
जहाँ शरीर की कुंठा पीड़ा नहीं है
न आधि व्याधि ही है ॥

(216) आत्मा गच्छन्नस्ति ।
आकर्षणेन परमात्मानं प्रति ॥
क्रन्दन्ति पुरजनाः परिजनाः ।
शृणोमि तेषाम् रोदनम् ॥

आत्मा परमात्मा से मिलने जा रही है
परिवार नगर के लोग रो रहे हैं ।
और मैं उनका रुदन सुन रहा हूँ ॥

(217) स्मृतिं हास्य-रोदनयोः नीत्वा ।
गच्छामि निमिल्य नयने ॥
नौका तरंगेष्वर्णवस्य ।
प्राप्तुम् सदाजल-समाधिम् ॥

हास्य रुदन की स्मृति ले
आँखे मूंद कर जा रहा ।
नौका तरंग से डोल रही
अब कब जल समाधि ले ॥

(218) संबधस्य क्षीणतन्तुः ।
खंडितः कदापि जायते ॥
अवरोधय नौकाम् इति कथने ।
आगतः न कोऽपि समीपे ॥

सबंध के क्षीण धागे
टूट रहे हैं आजक्षण ।
रोको नौका बोल रहे
पर समीप न कोई आए ॥

(219) दाराः पुत्राः वान्धवाः ।
औषधेन सह गंगोदकम् ॥
मया प्राप्तम् अमृतम् ।
प्राप्तम् मनोवांछितम् ॥

पुत्र स्त्री और बन्धुगण
औषधि गंगाजल दे रहे ।
मुझे तो अमृत मिल गया
जो गंगा जल से श्रेष्ठ मनोवांछित है ॥

(220) अश्रुकणाः निःसृताः ।
शुष्काः अश्रुकणाः ॥
नयनानि उन्मीलितानि बहूनि ।
नयने निमिलिते सदा ॥

आसू निकल रहे हैं
आँसू सूख गए ।
आँखे खुली हैं बहुत सी
दो आँखें बन्द हो गई ॥

कः हिन्दूः

(221) कः हिन्दूः हृदयेन शुद्धः ।
दैवत्वं प्रत्येकमानवे ॥
सहायतार्थम् सदा तत्परः ।
सर्वधर्मसमन्वयी ॥

हिन्दु कौन हृदय से शुद्ध
दैवत्व प्रत्येक मानव में ।
सहायतार्थ सदा तत्पर
सर्व धर्म समन्वयी ॥

(222) क्षमाधैर्याभ्यां दमनम् प्रवृत्तेः ।
ज्ञानविज्ञानेन प्रकाशनम् ॥
इन्द्रियनिग्रहः अक्रोधेन ।
पवित्रः सत्यवादी भव ॥

क्षमा धैर्य से प्रवृत्तियों को दबाना
ज्ञान विज्ञान से प्रकाशन ।
इन्द्रियों का दमन अक्रोध
पवित्र तथा सत्यावादी बनो ॥

(223) ऋषेः रक्तेन प्रवाहितः ।
मुनेः उपदेशैः ध्वनितः ॥
न्यासः प्राप्तः सदा काले ।
यज्ञतपोभ्यां अनलपवित्रः ॥

ऋषि का रक्त प्रवाहित
मुनि के उपदेश ध्वनित ।
सदा के लिए हिन्दु का धरोहर
यज्ञ तप से सदा पवित्र ॥

गान्धिजीव

(224) शांतिदूतः शान्त्यर्थम् ।
शान्ति रश्मिः मस्तके ॥
मानवत्वस्य प्रतिनिधिः ।
गान्धिजीव कलौ युगे ॥

शान्ति दूत शान्ति के लिए
शान्ति किरण मस्तक में ।
मानवता का प्रतिनिधि
गाँधीजी कलियुग में ॥

(225) अहिंसामार्गेण ।
प्रस्तुतः सत्याग्रहः ॥
कस्यापि न स्वीकार्यम् ।
पराधीनत्वम् कदा ॥

अहिंसा मार्ग से
सत्याग्रह प्रस्तुत ।
पराधीनता कभी स्वीकार नहीं किसी की ॥

सीतामढ़ी

(226) सीतायाः जन्मभूमिः ।
तपोभूमिः याज्ञवल्क्यस्य ॥
विद्यापति मण्डनमिश्रभूमिः ।
शंकर भैरवयोः पार्श्वेहि ॥

सीता की जन्मभूमि,
कर्मभूमि याज्ञवल्क्य की ।
विद्यापति मंडन मिश्र जन्में
शंकर-भैरव पास में ॥
(दमामी तथा भैरव स्थान)

(227) लक्ष्मणाः प्रक्षालयति पादम् ।
हिमालयात् समागताः ॥
वेदपाठेन अध्ययनेन ।
सदा स्मृता युगे युगे ॥

लक्ष्मणा सदा पखारे पाँव
हिमालय से आकर ।
वेद अध्ययन पाठ से
सदा सदा है स्मरणीय ॥

अथरीग्रामे

(228) अथर्ववेदाध्यनेन ।
"अथरी" नाम उच्चरेत् ॥
वेदऋचाः अद्यापि ।
सस्वरं शब्दायन्ते ॥

अथर्ववेद के अध्ययन से
अथरी नाम पड़ा ।
वेद-ऋचाएँ अब भी
सस्वर पाठ सुन सकते ॥

(229) वटुकाः वेदपाठार्थम् ।
आगच्छन्ति स्म गते काले ॥
शास्त्रार्थाय मीमांसायै ।
समीक्षायै पण्डितैः सह ॥

वेद पठन के लिए वटुकगण
आते थे घर घर को पहले ।
शास्त्रार्थ मीमांसा करने
समीक्षा करने पंडित से ॥

प्रणाम

(230) हस्ताभ्याम् अभिवादनम् ।
अभिवादनम् उर्ध्वं कृत्वा ॥
हस्ताभ्याम् अभिवादनम् ।
प्रणामे सांष्टांगम् नमितः ॥

दोनों हाथ उठाकर
अभिवादन करना
आठों अंग झुकाकर अभिवादन करना ॥

श्रद्धाञ्जली

(231) सत्य देव मिश्रस्य प्रसादः ।
मया जनेषु वितरितः ॥
आक्षरीपुस्तके श्लोकेन सह ।
पूज्यपादयोः समर्पये ॥

पूज्य गुरुवर सत्यदेव मिश्र जी
का प्रसाद मैंने बाँट दिया ।
श्लोक आक्षरी पुस्तक के साथ
चरणों में श्रद्धा सुमन समर्पित किया ॥

(232) त्वमेव शिक्षा त्वमेव दीक्षा ।
त्वमेव मह्यम् असि देवतुल्यः ॥

प्राप्तम् अमृतम् तव सान्निध्ये ।
अनन्तरं न प्राप्तम् कदापि ॥

तुम ही शिक्षा तुम ही दीक्षा मेरे लिए हे देव तुल्य
अमृत मिलाा जो चरण सेवकर
बाद में कभी फिर मिल न सका ॥

(233) अक्षरस्य अर्थः शब्दस्य व्युत्पत्तिः ।
अक्षरे शब्दे वसन्ति देवाः ॥
मस्तके भव त्वमेव सदैव ।
यदा मया श्लोकः लिखितुम् ॥

अक्षर का अर्थ शब्द की व्युत्पत्ति
अक्षर शब्द में देव बसे ।
मस्तक में सदा विराज रहो
जब जब लेखन का काम रहे ॥

(234) महारथी भीष्म पुस्तकात् ।
द्रोणस्य नमः भीष्माय ॥
नमामि मनसा भो श्रेष्ठ देवाय ।
देवतुल्याय पूज्याय नमः ॥
द्विजोऽस्मि द्विजस्य द्विजः त्वम् ।
नरेशेषु विप्रः विप्रस्य देवः त्वम् ॥

भीष्म देव को नमन द्रोण का
देवतुल्य जो पूज्य हैं ।

मैं ब्राह्मण पर तुम ब्राह्मणों के द्विज

राजाओं में विप्र विप्रो के देव तुम ॥

उपसंहारम्

(235) धनहीनः जीवितुम् नेच्छामि ।

नेच्छामि धनवैभवम् ॥

इच्छामि धनहीनाय ।

किमपि दानम् अर्जितधनात् ॥

धनहीन न जीना अच्छा

धन वैभव भी दुखकर ।

धनहीनों में थोड़ा ही

दान करे श्रेयस्कर ॥

संदेशम्

(236) यद्यपि सहस्त्र वर्षाणि ।

वयं दासाः जाताः ॥

जगद्धिताय कार्याणि ।

भारतीयैः करणीयानि ॥

यद्यपि हजार वर्षों तक दास रहें ।

पर जगहित कर्म न तजना अच्छा ॥

(237) सर्वत्र स्यात् भयं नष्टं ।
अहिंसा सदा सेव्या ॥
शान्त्यस्तु स्वस्त्यस्तु ।
विश्वशान्ति-स्थापकम् भारतम् ॥

सभी जगह हो भय का नाश
अहिंसा का वर्चस्व रहे ।
शान्ति रहे कल्याण रहे
विश्व शान्ति स्थापक भारत ॥

पञ्चतर्पणाः

(238) गंगा अस्ति यमुना अस्ति ।
इदम् जलमस्ति सरस्वत्याः ॥
लक्ष्मणायाः जलम् अस्तु ।
अमृतरूपेण सर्वदा ॥

(239) नास्ति गंगा नास्ति यमुना ।
नास्ति इयम् सरस्वती ॥
अमृतरूपेणं मया प्राप्ता ।
अमृतवाहिनी एव च ॥

(240) गंगोदकम् न इच्छामि ।
नेच्छामि यमुनोदकम् ॥
लक्ष्मणोदकम् मया प्राप्तम् ।
प्राप्तम् हि सर्वं जलम् ॥

(241) गंगा यमुना मम पार्श्वे ।
प्रक्षालयामि चतुर्दिक्षु ॥
कुरु कुरु पवित्रं शरीरं ।
अपवित्रस्य शुचिः शुचिः ॥

(242) गंगा-यमुना-सरस्वत्यः ।
आगच्छन्तु लक्ष्मणोदके ॥
कुरु कुरु जलम् पवित्रं ।
पिवाम्यहम् जलामृतम् ॥

लखनदेई नदी के जल ।

यह गंगा यह यमुना
सरस्वती का जल है ।
यह लक्ष्मणा का जल
सदा अमृतमय है ॥
न गंगा है यह यमुना
न सरस्वती यहाँ है ।
अमृत रूप में मैंने पाया
यह अमृत वाहिनी है ॥
गंगा जलकी न इच्छा
न यमुना जलकी ही ।
लक्ष्मणा जल है मिला मुझे
सभी जलों का मिश्रण ॥
गंगा यमुना मेरे आगे
देह पवित्र है करना ।
प्रक्षालन मल मल कर
अपवित्र को पवित्र करना ॥

गंगा यमुना सरस्वती
आगमन हो तीनों का ।
जल पवित्र हो गया
मैं पी लूँ अमृत सा ॥

विविधाः

(243) आधिं व्याधिं च महाव्याधिं ।
व्यथां सौख्यं न विभाजयेत् ॥
व्यथा काले च कालरात्रौ ।
जपस्य आशा केवलम् ॥

आधि-व्याधि वा महाव्याधि
व्यथा सुख न बटता ।
व्यथा काल काल रात्रि में
जप तप साथ में रहता ॥

(244) यत् ददाति श्रमिकेभ्यः ।
प्राप्नोति शत-शत-गुणनम् ॥
आधिपत्यं अधिनायकत्वं ।
पूँजीवादे संभवे ॥

जितना श्रमिक को दे
सैकड़ों गुना उससे पाता है ।
अधिकार मिला ऊपर से
पूँजीवाद कहलाता है ॥

(245) शक्तिः सदुपयोगाय ।

कदापि न दुरुपयोगाय च ॥

दुरुपयोगे शक्तिः याति ।

संभवः न पुनर्संचयः ॥

शक्ति का सदुपयोग हो

दुरुपयोग हो कभी नहीं ।

दुरुपयोग में शक्ति ह्रास

पुनः न प्राप्त हो सकता ॥

(246) उपदेशेन अनिष्टकाः ।

कदापि न परिवर्त्तिताः ॥

कृत्वा किल्विषं तदैव ।

उपदेशाः फलदायकाः ॥

उपदेश से बुरा करने वाले

न बदले हैं न बदलेंगे ।

बुराई कर लेने पर ही

उपदेश कभी कही प्रभाव दिखाते ॥

(247) हननं नोचितम् चेत् ।

हनन-काले चिन्तयेत् ॥

हननं सदा निकृष्टं ।

विनयेन ज्ञायते केवलम् ॥

मारना उचित नहीं अगर

मारने पहले तुरत सोचे ।

मारना सदा बुरा है

विनय से ज्ञात है होता ॥

(248) इस्लामस्य झंझावाते ।

अर्द्धविश्वम् समावृत्तम् ॥

आगते गंगाभूमौ ।

वेगः गंगोदके गतः ॥

इस्लाम की आँधी में

आधा विश्व झुलस गया ।

गंगा भूमि में आकर

वेग गंगोदक में समा गया ॥

(249) चेत् शोधाः न्यूनाः देशे ।

उपयोगाः करणीयाः विदेशस्य ॥

यत्र कुत्रापि मिलेत् ज्ञानम् ।

ज्ञात्वा उपयोज्यम् इतस्ततः ॥

अगर शोध कम हो देश में

तो दूसरे देश के शोध का उपयोग करें ।

जहाँ जिस तरह तकनीकी मिले

लेकर उपयोग करें समृद्ध बनें ॥

(250) जापान-देशे शोधाः न्यूनाः ।

उपयोगाः ज्ञानस्य खलु ॥

जलात् परमाणु-बमाय ।
इन्धनं तु अवाप्नोति ॥

जापान में बहुत ही कम शोध होता
है पर तकनीकी का उपयोग बहुत है ।
जल से परमाणु बम का इंधन प्राप्त करते हैं ॥

(251) व्ययः लाभात् पंचमांशस्य ।
शोधकार्ये करणीयः ॥
कुर्यात् स्वयमेव वा ।
आदेशेन पालितः ॥

लाभ का पंचमांश शोध में खर्च हो ।
यह व्यवस्था स्वयं करें वा राज्य का आदेश हो ॥

(252) दुःखात् दुःखितः ।
संस्कृतस्य भविष्यस्य ॥
न जातं कदापि ।
देशस्य भाषा ॥
पाठ्यते संस्कृते ।
विज्ञानस्य विषयः चेत् ॥
पुनर्भविष्यामि ।
संस्कृतं पठितुम् ॥

संस्कृत के भविष्य के दुःख से दुखित हूँ
क्योंकि राजभाषा न हुई कभी न है ।
अगर संस्कृत में विज्ञान के विषय
पढ़ायें जाएँ तो संस्कृत पढ़ने पुनः जन्म लूँगा ॥

वैराग्यम्

(253) नास्ति कोऽपि बन्धुश्च दारा ।
सखा न मित्रम् पुरजनः न कोऽपि ॥
कथयितुम् शक्नोमि न मम सुहृदस्ति कोऽपि ।
तथापि रे मनस् प्रीतिः कथम् ॥

न बन्धु न मित्र स्त्री कोई
सखा वा पुरजन न कहना यहाँ ।
कोई न अपना कह सका है अबतक
प्रीति अधिक न दिखाना यहाँ ॥

(254) मृताः जीवाः क्षणे-क्षणे इह ।
किंवा मृताः बलेन छलेन ॥
शस्त्रास्त्रमेव इह शास्त्रार्थः ।
तथापि रे मनस् प्रीतिः कथम् ॥

क्षण-क्षण जीवों का मरना यहाँ
वा छल बल से मारे जाते ।
शस्त्रास्त्र ही शास्त्रार्थ यहाँ
प्रीति अधिक न दिखाना यहाँ ॥

(255) अस्ति न कोऽपि इह धर्मभीरुः ।
कर्त्तव्यनिष्ठः दृश्यते न कोऽपि ॥
कुर्वन्ति सर्वे सदैव पापं ।
तथापि रे मनस् प्रीतिः कथम् ॥

धर्मभीरु है कोई नहीं
कर्त्तव्यनिष्ठ न दीख रहा ।
सभी सदा हैं पाप करते
प्रीति न अधिक दिखना यहाँ ॥

(256) वित्तं हि वित्तं रटन्ति सर्वे ।
यस्यास्ति वित्तं इच्छति पुनश्च ॥
कुर्वन्त्यकर्म वित्तोपार्जनाय ।
तथापि रे मनस् प्रीतिः कथम् ॥

धन ही धन रटते सब कोई
जिसको वित्त और ही चाहे ।
धन के लिए अधम कर्म भी
प्रीति न अधिक दिखाना यहाँ ॥

(257) वदन्ति सर्वे गते हि काले
इदानीं न मम प्रयोजनम् ।
करोमि कर्म इच्छामि कुर्वन्
तथापि रे मनस् किं प्रीतिः कथम् ॥

सभी लोगों का कहना
मेरा संदर्भ न रहा ।
करना कर्म करते रहना
प्रीति न अधिक दिखाना यहाँ ॥

■

VICHCHE

विच्चे (अंग्रेजी में काव्य संग्रह "स्वस्त्यस्तु" से)

VICHCHE Grace me
With your "Ai" ऐ face
I am alone from mulitude
to obtain your grace

I have not seen
even I can not see
your hreen ह्रीं face
I can fore see

I bow to you
at your Jn Jn जं जं feet
I see distinctly
your shan shin शां शीं sheet

your ninth face comes
my eyes are closed
in deep meditation
you are always posed

you come before me
when I breathe last
Jayati Jayanti Namostute
forgive for my past
जयती जयंती नमोऽस्तुने

विच्चे-देवी आराधना स्वर,

ऐं-सृष्टिरूपा, ह्रीं-प्रतिपालिका

शां शीं-शुभकारी, Ninth face सिद्धि-रूपा

"विविधा" से

VIVIDHA

Self-Realisation.

Two thousand five hundred years ago
there was a man named Gautam
Always after truth what actually it is
dying of a man, whether to come
or why a man grows old when
while eating drinking and brea.hing
getting its peak and then gradual decay
why sudden stoppage of heart beating
where from one comes and where to go
why sudden encounter, hale and hearty though
is there relationship before and after
with life cycle, behind the show
reply of saffron saint vague and clumsy
only coverage of words not satisfying
he saw man growing old and dying
can he escape any way from dying.
Peeped in temples place of worship
saluted all statuse-begged before mass
how to make life worth and useful

how the best the time to pass
finally dedication devotion surrender to God
meditation uder the pippal tree
enlightned him with eternal wisdom
peace tranquility what a man has to be
non-killing, purity of personal life
go to ashylum of God's incarnation
either a Brahman or a butcher with prayer
is equally entitled for salvation
Gautam was bestowed with divine light,
in penance after a pretty long time
in twentieth Century with nuclear enrichment
wastage of fraction of time is crime
doing the duty always to be done
maintaining all values of life how
with dignity, personal identity sanctity
eternal peace, satisfaction in thou
I search vehemently research of myself
You in I, in quest of truth
who is to came before me
to lead to everlasting truth
but I repent and repeat
how to over come bewilderness
to cross across sea of disappoinment
to take me to sober kindness
a leaf in the storm a drop in the sky
moves from place to place no face
penance, meditation, dedication
all in this age how to replace
I feel have to feel
must feel what to be

surresnder to God with salutation
prayer for divinity to almighty
Neither bewilderness, nor sorrow also no pain,
no inkling of discontment on the face
all sense organs full alert and active
no feeling of departure-Almighty to grace
no feeling of pain while
in the state of Samadhi, be it so
with full consciouness and prayer
doing the duty knowing to go
no desire left unfulfilled
no grudge always "Kartavyam Kurutah"
salutation to all "Jayati Jayanti"
namostute " Sada Japtah "

22/5/1995

■
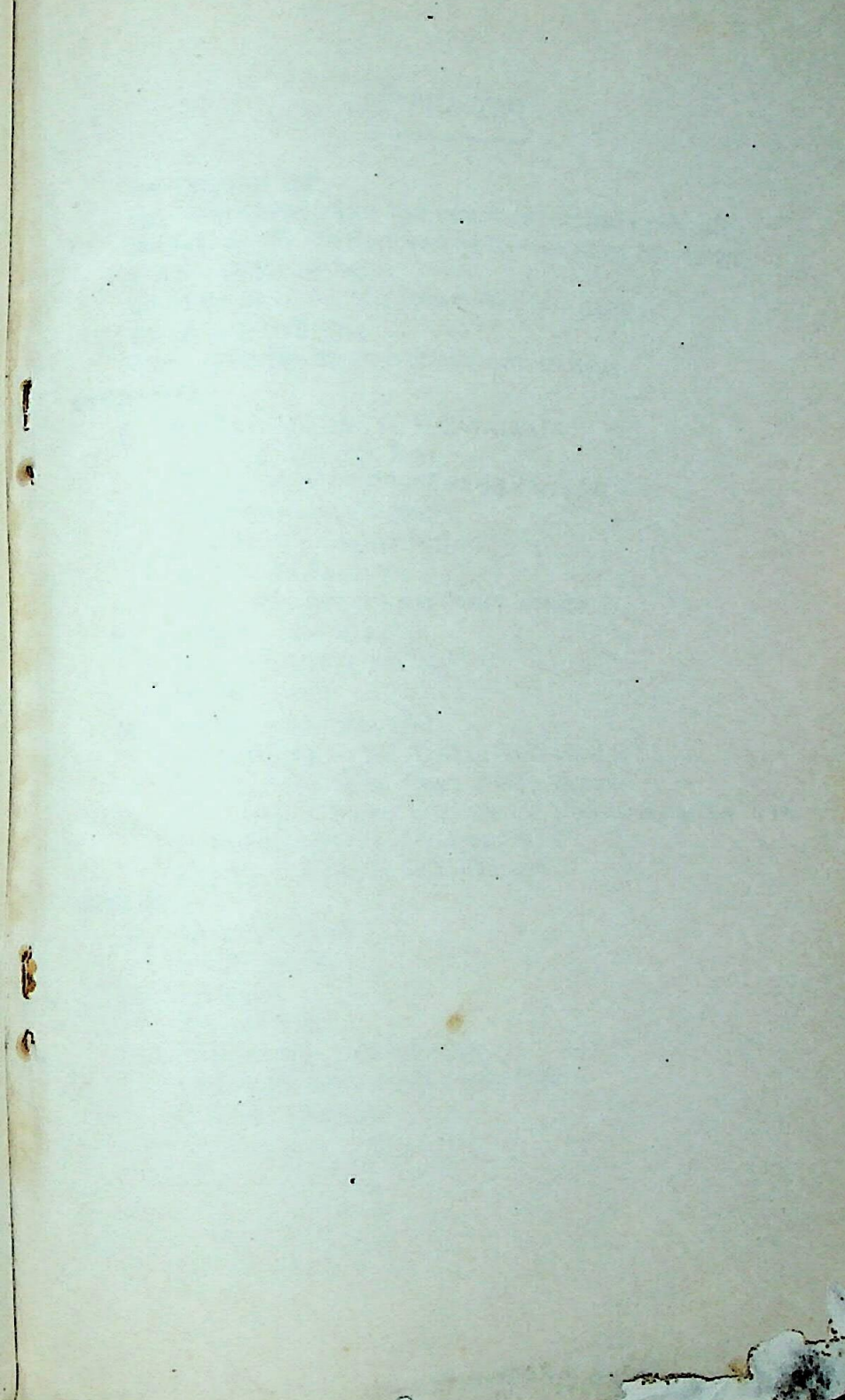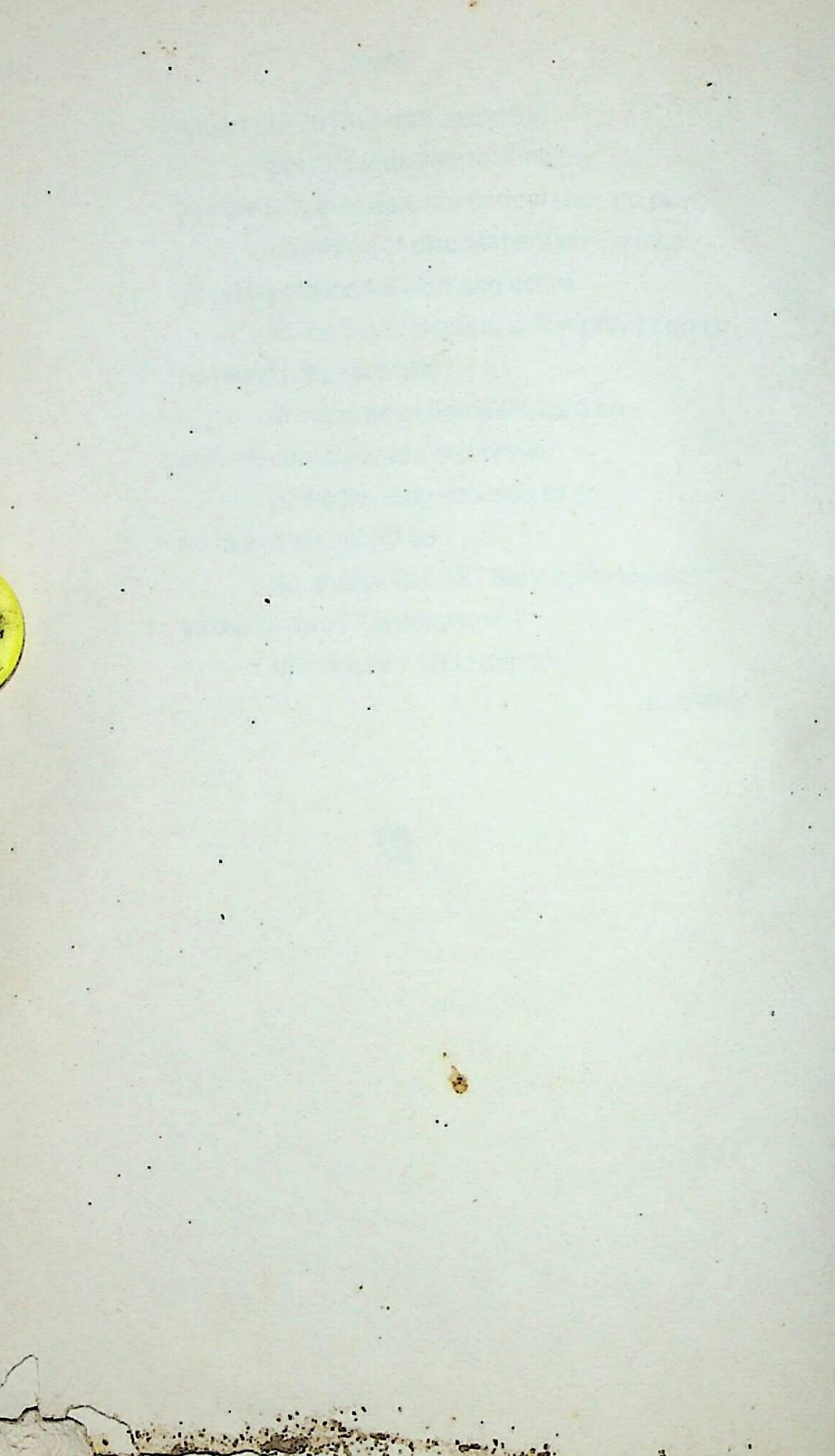
परिचय-पत्रम्

नाम – *साधु शरण सिन्हा*
पता – सिन्हा टेक्निकल सर्विसेज, सिन्हा, हाउस, गोलवली (महालक्ष्मी डाइंग के सामने) एम० आई० डी० सी०, फेज (1) डोंविवली पूर्व, जि०- थाना (महाराष्ट्र), पिन - 421203,
टेलीफोन – 0251–456760
जन्म-स्थान – ग्राम – अथरी, जि०- सीतामढ़ी (बिहार) पिन – 843311
जन्म दिन — 5 जनवरी 1939
शिक्षा — बैचलर ऑफ केमिकल इन्जीनियरिंग, धर्मरत्न धर्म विशारद

प्रकाशित पुस्तकें :–

(i) **REGIO** – SELECTIVE CATALYSTS
C A : 115 : 28630 (U.S.A)
अमेरिकी लेखकों में रसायन पुस्तकों तथा लेख लिखने के लिए नाम

(ii) व्याख्यायित — काव्य संग्रह (हिन्दी)

(iii) यत्र-तत्र-सर्वत्र — काव्य संग्रह (हिन्दी
भूमिका — डा० बी० डी० मिश्र
प्रधान — भाषा विज्ञान सागर विश्व-विद्यालय - मध्य प्रदेश

(iv) महाप्रयाण — काव्य संग्रह (हिन्दी)
भूमिका — डा० गिरिजा शंकर त्रिवेदी
सम्पादक — नवनीत

(v) स्वस्त्यस्तु — काव्य संग्रह - अंग्रेजी
FOREWORD – Mr. ADIL J. JUSSAWALA
Chief Commentator, Times of India, Bombay.
S. S. Sinha's Poems celebrate the glory of living despite the darkest tribulations of body and spirit.
Rhymes – Rhythms Shine Through

पुस्तकें प्रकाश्य :–

(i) विविधा "VIVIDHA"
काव्य संग्रह (अंग्रेजी)

(ii) महारथी भीष्म
काव्य संग्रह (हिन्दी)
हमेशा रासायनिक — पत्रिकाओं में लिखना।
रासायनिक लेख के लिए अमेरिका के लेखकों में नाम
C A : III : 136333d